(1) प्रस्तावित योजना का कार्यक्षेत्र राज्य –

cqUnsy[k.M] e/;izns'k

(2) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा का नाम (क्षेत्रीय, स्थानीय, हिन्दी एवं अंग्रेजी में –

भारत की अमूर्त सांस्कृतिक विरासत में इस योजना के अंतर्गत ''मामुलिया'' कला रूप को चिन्हित किया गया है –

क्षत्रीय नाम	हिन्दी नाम	अंग्रेजी नाम
ekgqfy;k] ekeqfy;k] egcqfy;k	**ekeqfy;k**	**MANMULIYA**

(3) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक/परम्परा से संबंधित समुदाय का भाषिक क्षेत्र और भाषा, उपभाषा तथा बोली का विवरण –

चिन्हि कलारूप मामुलिया अमूर्त सांस्कृतिक विरासत से संबंधित क्षेत्र की उपभाषा/भाषा एवं बोली का विवरण निम्नानुसार है।

बुन्देलखण्ड का परिचय

(अ) बुन्देलखण्ड की भौगोलिक पृष्ठभूमि
(ब) बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि
(स) बुन्देलखण्ड का नामकरण
(द) भाषाई पृष्ठभूमि

(अ) बुन्देलखण्ड की भौगोलिक पृष्ठभूमि :–

इतिहास वेत्ताओं के बुन्देलखण्ड को भारतवर्ष का हृदय कहा है तो भूगोल शास्त्रियों ने विन्ध्याचल को हिमालय से भी पुरातन बताया है। विन्ध्यांचल की तलही में एक विशाल बीहड़ वन है, जो विन्ध्य श्रेणियों से घिरा है, जहां उच्च तुंग श्रृंगों से सहसत्रों झरने और प्रपात प्रवाहित होते रहते हैं। इस स्थान को विन्ध्यक्षेत्र कहते हैं।

यह प्रदेश नर्मदा सोन खड्ड के उत्तर में गंगा घाटी की ओर मुंह किये स्थित है। यह वास्तव में भारत के प्रसिद्ध पठार का उत्तरी मध्यवर्ती भाग है। इस प्रदेश में मध्यप्रदेश के दतिया, टीकमगढ, छतरपुर, पन्ना, भिण्ड की लहार तहसील एवं ग्वालियर की भाण्डेर तहसील और उत्तर प्रदेश के ललितपुर, झांसी, हमीरपुर, जालौन, बांदा जिले सम्मिलित हैं।

सामान्य तौर पर विन्ध्य परिक्षेत्र ही बुन्देलखण्ड है परन्तु इसका सीमांकन समय–समय पर प्रशासनिक आधारों पर भी गढ़ा गया। ओरछेश महाराजा वीरसिंह देव प्रथम के समय बुन्देलखण्ड में वर्तमान बुन्देलखण्ड तथा कुछ भू–भाग पश्चिमी बघेलखण्ड का भी शामिल था। जबकि डंगई क्षेत्र (पन्ना) के राजा छत्रसाल के समय ''इत यमुना, उत नर्मदा, इत चंबल, उत टौंस, बुन्देलखण्ड की सीमा मानी जानी लगी थी। भौगोलिक रूप से विन्ध्य परिक्षेत्र विंध्येला (विंध्यइला) कहलाता था जो एक प्रथक इकाई के कारण विन्ध्येला अपभ्रंश में बुन्देला और विन्ध्येलखण्ड – बुन्देलखण्ड हो गया।

पारंपरिक और ऐतिहासिक तौर पर बुन्देलखण्ड मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश के बीच विस्तारित एक बडे भू भाग को माना जाता है, पर वर्तमान में बुन्देलखण्ड को दोनों राज्यों के ग्यारह जिलों की भौगोलिक सीमाओं में वस्थित माना जा रहा हैं। इसमें मध्यप्रदेश का समूचा सागर संभाग जिसमें सागर, दमोह, पन्ना, छतरपुर और टीकमगढ जिले आते है। जब कि उत्तरप्रदेश के झॉसी, हमीरपुर, महोबा, बांदा, ललितपुर और जालौन जिले इस राज्य में शामिल है। इस तरह यह क्षेत्र मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश में बटा हैं।

ऐतिहासिक आधार पर इस क्षेत्र की सीमाएं बनाई जाए तो इस राज्य के महापुरूष महाराज छत्रसाल को लेकर उस कथन को महत्वपूर्ण माना जा सकता है जिसमें कहा गया है कि –

''इत जमना उत नर्मदा, इत चम्बल उत टोंस।
छत्रसाल सो लरन की, रही न काहू होंस।।

इस दोहे के अनुसार बुन्देलखण्ड की उत्तर की सीमा जमुना नदी है। दक्षिण सीमा नर्मदा नदी है, पूरब की सीमा टोंस नदी है और पश्चिम की सीमा चम्बल नदी है। ये इसकी ऐतिहासिक सीमाएं हैं। कुल मिलाकर महाराज छत्रसाल ने बुन्देलखण्ड में अपने इस राज्य को चारों प्रमुख नदियों के मध्य माना है अर्थात चारों नदियों को छूने वाला राज्य ही बुन्देलखण्ड है।

बुन्देलखण्ड पर महत्वपूर्ण कार्य करने वाले अंग्रेज अफसर जार्ज ए ग्रियर्सन ने लिखा है कि बुन्देली भाषा का क्षेत्र बुन्देलखण्ड के राजनीतिक क्षेत्र से मिलता जुलता नहीं है। क्योंकि किसी देश की सीमा का निर्धारण प्रशासनिक आधार पर नहीं, बल्कि भाषा, बोली, सामाजिक, सांस्कृतिक, आचार विचार, संस्कार भोजन और लोक संस्कृति के आधार पर किया जाना चाहिए। इस प्रदेश की भाषा बुन्देली है जो यमुना, नर्मदा के मध्य की सिन्ध पहूज, बेतवा, जामुनी, धसान, सोनार और केन के कछारी भू–भाग के ग्रामीण अंचलों में बोली जाती हैं जिसके केन्द्रीय स्थल, झॉसी, टीकमगढ और सागर है। यहां बुन्देली का परिनिष्ठित स्वरूप उपलब्ध होता है।

इस प्रकार सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषा बोली के ठोस आधारों पर निर्मित मौलिक इकाई 23.00 से 26.00 उत्तरी अक्षांश एवं 77.5 से 79.5 पूर्वी देशांतर के मध्य कुछ लंबाकार भू भाग ही सही बुन्देलखण्ड है।

प्राकृतिक परिस्थितियॉ :–

भौतिक रूप – भारतीय पठार का अंग होने के कारण इसकी संरचना संबंधी विशेषताएँ वहीं हैं जो राजस्थान उच्च भूमि की है और यहां पूर्व कैम्ब्रियन महाकल्प में बनी प्राचीन नाइस एवं ग्रेनाइट शैलें पाई जाती हैं जिनके अवशेष प्रायः ऊंचे कठोर टीलों के रूप में मिलते है। यह पठारी प्रदेश बहुत नहीं है। सागर तल से इसकी औसत ऊॅचाई 300 से 600 मीटर तक है।

यहां की भूमि पठारी, पथरीली और ककरीली है जिसे रॉकड़ कहा जाता है। उत्तरी एवं दक्षिणी बुन्देलखण्ड की कुछ भूमि काली किस्म की मोटी है जबकि मध्यभाग की भूमि ऊँची नीची है। उत्तरी दक्षिणी पट्टियों की भूमि समतल एवं उपजाऊ है। मध्य बुन्देलखण्ड की टौरियाऊ भूमि में यत्र–तत्र मोटी, पतरूआ, कॉकर, काबर, मार, पडुआ, छापर और छिनकी जैसी विभिन्न प्रकार की भूमि प्राप्त है। जो जल के बहाव और ठहराव कर्म के आधार पर निर्मित होती रहती है। यहॉ की नीची और समतल भूमि कृषि कर्म एवं ऊँचों भूमि आवास के उपयोग में लाई जाती है। दो पहाडियों के मध्य नीची भूमि में पत्थरों से सरलतापूर्वक तालाब और बंधियॉ बना लेना यहॉ की विशेषता है। पहाडियॉ सुरक्षित और सुरम्य दुर्गो के निर्माण में भी उपयोगी रही हैं। इसी कारण बुन्देलखण्ड में दुर्गो, गढियों एवं सरोवरों की अधिकता पाई जाती है।

दक्षिणी पठारी भाग विच्छिन्न है। मध्य का ग्रेनाइट पठार 300 मीटर ऊँचा है। नदी घाटियों में चौरस मैदान है। उत्तर की ओर एक तिहाई भाग चौरस है। इस पठारी भाग में कुछ नीची पहाडी श्रेणियॉ स्थित हैं। इसमें तीन विशेष प्रसिद्ध है – उत्तरी पूरवी सिरे पर कैमूर की पहाडियॉ, रीवा से मिर्जापुर जिले तक फैली है जो काफी नीची हैं। दूसरी श्रेणी इस प्रदेश के मध्यभाग में दक्षिण–पश्चिम से उत्तर पूरब की ओर फैली है और मानरेर श्रेणी के नाम से संबोधित होती है। तीसरी श्रेणी विन्ध्यांचल पर्वत की है जो प्रदेश के दक्षिणी पश्चिमी भाग में स्थित है।

इस पठार का दक्षिणी सिरा एकदम ऊंचा उठा हुआ है अतः इसका जल अपवाद उत्तर की ओर है और गंगा के मैदान के पास पहुंचकर पठारी भूमि एकदम समाप्त हो जाती है। अतः गंगा नदी की ओर बहने वाली नदियॉ इस पठार से उतरते समय अनेक जल प्रताप बनाती है। इस प्रदेश से उतरते समय अनेक जलप्रपात बनाती है। इस प्रदेश की मुख्य नदियॉ बेतवा, केन व धसान है। जो उत्तर की ओर बहकर गंगा एवं यमुना नदियों में मिल जाती है। बेतवा इस प्रदेश की पश्चिमी सीमा पर बहती है। टोंस नदी इस पठार को बुन्देलखण्ड एवं बघेलखण्ड दो भागों में विभक्त करती है। मैदान की ओर

मिट्टी बढिया एवं उपजाऊ है। पठारी भाग में हल्की बालू युक्त कम उपजाऊ मिट्टी मिलती है।

जलवायु :– इस प्रदेश की जलवायु आर्द्र है, फिर भी समुद्र से होने के कारण यहॉ की जलवायु महाद्विपीय ह। कर्क रेखा इस प्रदेश के मध्य से लकर गुजरती है, अतः गर्मियों में तापमान काफी ऊँचा हो जाता है जो 30 से.ग्रे. औसत रूप से रहता है। सर्दियों में काफी ठण्ड पडती है और तापमान का औसत 18 से.ग्रे. तक गिर जाता है। वार्षिक ताप– परिसर 16 स.ग्रे. तक पाया जाता है।

गर्मियों में मानसून हवाएँ इस प्रदेश पर अपना स्पष्ट प्रभाव डालती है बंगाल की खाडी से आने वाली मानसून इस प्रदेश के पूर्वी भाग में वर्षा करती है और सोन नदी के घाटी के निकट 125 से.मी. तक वर्षा होती है। पश्चिम की ओर वर्षा कम होती जाती है। बुन्देलखण्ड में 75 से.मी. तक वर्षा होती है।

सरिताएँ :– यहॉ की प्रमुख नदियों में बेतवा, धसान, चम्बल, सिन्ध, पुष्पावती, केन, जामनेर, नर्मदा, आदि नदियॉ वन प्रदेश की रक्षा करती आ रही है।

इनके अतिरिक्त जमुना, पहूज, बीला, बाधिन, सोनार, बेरमा, हिरन, जामुनी, जमडार, सजनाम, उमिल नदियॅा सभी उत्तर की ओर बहती है। केवल नर्मदा कछार का ढ़ाल उत्तर से दक्षिण को है। यहॅा की नदियां पठारी होने के कारण तेजप्रवाही हैं। अधिकांशतः राज्यों, जिलों एवं गांवों की सीमाएं नदियों और नालों से प्राकृतिक बनी हुई है।

कृषि :– बुन्देलखण्ड की 83000 वर्ग मील क्षेत्र की जमीन खेती के लिए उपयोगी मिट्टी वाली है पर वर्तमान में इसका केवल 1/3 भाग खेती में है। 1/3 भाग में जंगल है और शेष हिस्सों में खेती करने से हमारी खेती आसानी से वर्तमान से दूनी हो सकती है संपूर्ण बुन्देलखण्ड में औसतन वर्षा अच्छी होती है। जमीन सिंचाई युक्त होने पर एक फसल की बजाय तीन फसल हो जाती है।

वर्षा ऋतु में बोई जाने वाली फसल स्यारी या कतकी कहीं जाती है, जिसमें ज्वार, धान, उर्द, मूंग, कोदो, समॉ, लठारा, कुटकी, और तिली बोई जाती है। ये मोटे अनाज कहे जाते है तथा सैंकड़ों वर्षो तक बिना धुने सुरक्षित रखे रहते है। दूसरी फसल उन्हारी या वैत की कही जाती है, यह कार्तिक, अगहन, में बोई एवं चैत में काटी जाती है। इसमें गेहूँ, चना, जौ, मसूर, तेवडा, अलसी, सरसों और सेउऑ पैदा किया जाता है। इस फसल को जाड़ा एवं पानी अधिक चाहिए। तीसरी फसल गर्मी में बोई जाती है। मूँग, उर्द, कलोंदा, कुम्हडा, चीमरी, और जिठऊ साठिया धान पैदा की जाती है। यह फसल विशेषकर तालाबों और नदियों में की जाती है। कपास की खेती जालौन, बॉदा, हमीरपुर, क्षेत्रों में की जाती थी।

खनिज संपदा :– बुन्देल भूमि खनिजों से भरपूर है। यहॉ लोहा, अभ्रक, सीसा, चॉदी, हीरा और चूना, जैसी बहुमूल्य सम्पदा प्राप्त है। हीरा छतरपुर, पन्ना और अजयगढ़ क्षेत्रों में, लोहा एवं सीसा टीकमगढ़, नरबर, छतरपुर, झॉसी, बिजावर में चूना, कटनी, दमोह, सागर, पन्ना, जबलपुर, दतिया में चॉदी टीकमगढ के तमोरा, सूरजपुर, हटा, नारायणपुर में, अभ्रक टीकमगढ, सागर गौरा, पत्थर पन्ना, टीकमगढ में, निसाव (चीप) पत्थर ललितपुर, सागर, पन्ना, नमक, चिरगांव के पास उपारी में प्राप्त होता है। वर्षा ऋतु में पहाडियों एवं टौरियों की तलहटी के नीचे क्षेत्रों में पानी के ऊपर चिकना द्रव पदार्थ दिखता है जो पेट्रोलियम जैसे चिकने तेल पदार्थो के होने के स्पष्ट संकेत है।

आवागमन और यातायात :– बुन्देलखण्ड पहाड़ी और जंगली भू–भाग होने से आवागमन के साधनों में पिछडा रहा है। टेढ़े–मेढ़े गहरे नाले, नदियों, नीचे ऊँचे घाट और दर्रे यातायात में बाधक रहे है। नदियों पर पुल न होने से आवागमन एवं यातायात के साधन बैलगाडी, घोडा, गधे, भैंस, भैंसा और लद्दू बैल (भर्रे) ही थे। बोझा ढोने वाले ''बुझिया'' भी सामान ले जाने का

काम करते थे। अंग्रेजी शासन के प्रभाव से सड़क मार्गो में कुछ सुधार हुआ था।

परिवहन के साधनों का इस प्रदेश में विकास नहीं हुआ है। बम्बई झॉसी रेलमार्ग इस प्रदेश के मध्य से गुजरता है। इसके अतिरिक्त मानिकपुर झॉसी कटनी बीना रेलमार्ग मुख्य है। 5 हजार कि.मी. लम्बी सड़कें है जिसमें 60 प्रतिशत का प्रयोग साल भर होता है।

बुन्देलखण्ड के वन–उपवन :– बुन्देलखण्ड का अधिकांश भाग, विशेषकर मध्य की पठारी भूमि वनाच्छादित है। यहॉ के जंगल वन संपदा से भरपूर है। इमारती एवं जलाऊ लकड़ी के अतिरिक्त औद्योगिक लकड़ी भी यहॉ उपलब्ध है। सागौन, सेजा, कुरौ, धवा, करधई आदि के अतिरिक्त बांस, सलैया, गुंजा, छेवला, कर्रा, हर्रा, बहेड़ा ऑवला भी बहुतायत में प्राप्त है। खैर के जंगल भी खूब हैं। आम, जामुन, खिरनी, अचार, तेंदू, बेर, महुआ, मकोर जैसे फलदार वृक्ष यहॉ के वनों में भारी संख्या में हैं। औषधियों वाली जडी–बूटी और घास भी प्राप्त होती है। वन वृक्ष बुन्देलखण्डवासियों के जीवन साथी है। फलों को खाकर कितने अधिक लोग जीवन गुजार देते है कि गणना भी कठिन है। अकाल के समय तो यहॉ के लोग वनोपज से अपने प्राणों की रखा करते है। इसलिए यहॉ कहावत है कि –

''मेघ करौंटा लैगओ, इंद्र बॉध गओ टेक।
बैर मकौरा यौ कहै, मरन न पावे एक।''

वनफल खाकर भी लोग अपना अकाल का समय काट लेते हैं और प्रसन्न रहते हैं।

इस प्रदेश में बिखों (छोटे पौधों) में तुलसी, बोबई, सरफौंका, दौना–मरूआ, करौदी, सहदेवी, बला, महाबला, किरकिचयाऊ, बांसा आदि और लतिकाओं में कृष्णकान्ता, राधा कान्ता, गुरबेल, नागबेल ओंधपुष्पी आदि तथा जड़ी–बूटियों में गुरमार, लक्ष्मणा, भटा, कटारी, मदन मस्त, रतनजोत,

अमरबेल, भूषाकर्णो, भौफली, शंखपुष्पी आदि की बहुतायत है और ये प्रसिद्ध भी है।

यहाँ की प्राकृतिक वनस्पति मानसूनी पतझड प्रकार की है। जिसमें सागौन, साल, बाँस, महुआ, ढाक, शीशम तथा बबूल वृक्ष मुख्य है। कम वर्षा एवं अनुपजाऊ मिट्टी वाले ऊबड़–खाबड भाग पर छोटी कॉटेदार झाडियाँ उगती है। निचले पठारों एवं कम वर्षा वाले भागों में घास के मैदान मिलते है। वनों में कुछ विशिष्ट घासें कॉस एवं कालिंजर उगती है। जिनका उपयोग कागज उद्योग में किया जाता है। सोन की घाटी में साल के जंगल है तथा विन्ध्यांचल की पहाड़ियाँ जंगलों से ढकी है। भारत में सबसे बढ़िया सागौन यहां मिलता है। यहॉ के वनों से इमारती लकड़ी, गोंद, लाख, तथा ईधन की लकड़ी विशेष रूप से प्राप्त होती है। इस प्रदेश की 7.2 प्रतिशत भूमि वनाच्छादित है।

(ब) बुन्देलखण्ड का प्राचीन भौगोलिक परिवेश :–

यह एक प्रमाणिक तथ्य है कि भौगोलिक परिप्रेक्ष्य के अभाव में इतिहास स्वयं में महत्वहीन है। किसी भी देश या क्षेत्र को ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक समृद्धि काफी हद तक उसके भौगोलिक परिवेश से नियंत्रित एवं निर्मित होती है। इसीलिए अनिवार्यतः यह एक प्रमाणिक तथ्य है कि किसी भी क्षेत्र विशेष का इतिहास उसके भौगोलिक कारणों पर निर्भर होता है क्योंकि वे ही कारक उसे पुष्ठ स्वरूप प्रदान करते है। बुन्देलखण्ड की सांस्कृतिक समृद्धि, कला वैभव, प्रागैतिहासिक, औद्योतिहासिक एवं ऐतिहासिक पुरावशेष राजनीतिक शौर्यगाथा तथा समाजार्थिक एवं धार्मिक परम्पराऍ मूलतः उसके विशिष्ट भौगोलिक स्थिति के प्रतिफल है। क्योंकि यह भू–भाग उत्तरी एवं दक्षिणी भारत क मध्य अपनी विशिष्ट भौगोलिक स्थिति, चतुर्थिक पार्वव्य प्रदेश प्राकृतिक संसाधनों आदि के कारण विभिन्न कालों में शासकों एवं ऋषियों को अपने विशिष्ट अधिवास के लिए आमंत्रित एवं आकर्षित करता रहा है। इतना ही नहीं बल्कि उत्तर एवं दक्षिण के मध्य प्रवेश द्वार के रूप में

सिद्ध होकर इस भूखण्ड ने शासकों, व्यापारियों, सार्थवाहों एवं धार्मिक प्रेणाताओं को उनके प्रथम प्रयास में ही सम्मलता अर्जित कराई। इसकी अद्‌भुत एवं आकस्मिक प्राकृतिक घटनाओं ने यहॅा के निवासियों को अत्यंत सुद्रढ एवं स्वावलम्बी होने के साथ साथ ईश्वरीय सत्ता के प्रति नत बनाया। यह पार्वव्य प्रदेश अपनी आकर्षक उच्चावच, भू–संरचना न्यूनाधिक निम्न मृदा, कठोर जलवायु आदि के कारण अपनी पृथक पहचान बनाए हुये है।

(स) बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि :–

भारत वर्ष के मध्य भाग में अवस्थित नर्मदा के उत्तर और यमुना के दक्षिण विन्ध्यांचल की पर्वतमालाओं से समाविष्ट और यमुना की सहायक नदियों के जल से प्लावित, प्राकृतिक सौंदर्य से समन्वित जो भू–भाग है, उसे हम बुन्देलखण्ड कहते हैं।

बुन्देलखण्ड की भूमि अत्यंत समृद्धशाली है, इसका इतिहास भी गरिमामय और शौर्य से परिपूर्ण है। भारत के स्वतंत्र होने के पूर्व यह अनेकानेक छोटे बड़े राज्यों तथा जागीरों में विभक्त था। पराधीनता के उस युग में यहॅा राजनीतिक उथल पुथल होती रहीं, साथ ही विभिन्न क्षेत्रों में विकास कार्य भी संचालित होते रहे। राजतंत्र अपने ढंग पर अपने–अपने राज्यों का संचालन करता रहा –

वैदिक युग – ऋगवैदिक काल में ऋग्वेद के अनुसार आर्यो का निवास सप्त सिन्धु तक रहा। अतः बुन्देलखण्ड उनके प्रभाव से बाहर रहा। स्पष्टतः यहॉ पुलिन्दों, निषादों, शबरों, दॉगियों आदि आर्योत्तर जातियों का निवास था। पुलिन्दों का म्लेच्छ कहा गया है क्यों वे आर्यो की यज्ञमूलक संस्कृति को नहीं मानते थे। निषादों और शबरों ने बाद में आर्य संस्कृति स्वीकार की थी। उत्तर वैदिक युग में आर्यो ने हिमालय और विन्ध्यांचल के बीलच का क्षेत्र अपने अधिकार में कर लिया था। निश्चित है कि एक सांस्कृतिक संघर्ष वर्षो तक चला जिसका अनुमान बाल्मीकि रामायण के राम के अभियान से लगाया

जा सकता है। एक तरफ दक्षिण की रक्ष–संस्कृति थी दूसरी ओर आर्य संस्कृ ति और तीसरी तत्कालीन क्षेत्रीय संस्कृति। क्षेत्रीय निषादों, शबरों, कोल, भील आदि ने तो राम का साथ दिया था, क्योंकि राक्षस उन्हें सताते थे लेकिन आर्य और वन्य संस्कृति के समन्वय में अधिक समय लगा था। सूत्र युग में आर्यो ने कठोर नियम, उपनियम बनाकर लोक जीवन में परिष्कार करने का प्रयत्न किया था पर उससे जटिलता और कर्मकाण्डी विधि–विधान की कट्टरता भी आई थी जो लोक सहज न थी। बुन्देलखण्ड में उसका प्रभाव बहुत बाद में पड़ा। इसी कारण यहॉ की वन्य संस्कृति महाभारत काल तक बनी रही।

रामायणकाल –

इतिहासकारों का मत है कि आर्यो ने विन्ध्य क्षेत्र पर सेना के द्वारा अधिकार नहीं किया वरन ब्राह्मण और क्षत्रियों के छोटे दलों ने प्रवेश कर जंगलों को साफ कर अपनो कुटी तथा निवास बनाकर बस्तियॉ बसायी परन्तु वास्तविकता यह है कि अगस्त, अजि आदि ऋषियों ने विन्ध्य की प्रकृति की गोद में आश्रमों की स्थापना की थी जिससे इस जनपद में आश्रमी संस्कृति का प्रादुर्भाव हुआ था।

वैदिककाल में बुन्देलखण्ड आदिम जन जातियों का स्थल था लेकिन रामायण काल में ब्राह्मण अगस्त मुनि बनो से आच्छादित इस भूखण्ड में आये थे, जिन्होंने कालिंजर स्थल को अपनी तपोभूमि बनाई थी, तदनन्तर बुन्देलखण्ड भूमि तपस्या और ईश्वर आराधना के स्थल के रूप में विख्यात हो गयी। बाल्मीकि रामायण में नर्मदा नदी का नाम नहीं आया है। इससे स्पष्ट है कि उस काल तक आर्यो की बस्तियां नर्मदा तक नहीं पहुंची थी परन्तु अत्रि, सुतीक्षण और शरभंग ऋषियों के आश्रम यमुना के किनारे दक्षिण ही में थे। जिनमें श्रीराम चंद्र जी बनवास की अवधि में गये थे। अत्रि का आश्रम तो चित्रकूट (बुन्देलखण्ड) में प्रसिद्ध ही है।

कालान्तर में बुन्देलखण्ड का यह भू–भाग रामचन्द्र के भाई शत्रुधन के पुत्र शत्रु घाती के अधिपत्य में हो गया था। जिसकी राजधानी केन नदी के किनारे कुशावती बनायी गयी थी।

महाभारत काल :–

महाभारत काल में बुन्देलखण्ड के पूर्वी भाग में बेदि राज्य था। आधुनिक दमोह जिला और उसके उत्तर में रजबाडों का प्रांत (दर्शाण नदी के पश्चिम का भाग) चेदि देश में ही था। जो पश्चिम में बेतना और उत्तर में यमुना नदी तक था। वेदि देश में महाभारत के समय शिशुपाल का राज्य था। इसकी राजधानी चॅदेरी थी, यह स्थान आज भी प्रसिद्ध है। दशपर्ण देश में सागर जिला और बुन्देलखण्ड का कुछ भाग था और इसकी राजधानी विदिशा थी। इसमें हिरण्य वमी राजा राज्य करता था। जिसकी पुत्री पांचाल नरेश द्रुपद के पुत्र शिखंडी को व्याही गयी थी। लेकिन यह पुरूषत्व हीन था इस कारण हिरण्य वर्मा और राजा द्रुपद में युद्ध भी हुआ था लेकिन तत्पश्चात दोनों में सन्धि हो गई थी। इसके बाद दर्शाण देश में सुधमी का नाम प्राप्त होता है। जिसका युद्ध पांडवों के सेनापति भीमसेन से हुआ था, जिसमें भीमसेन को विजय प्राप्त हुई थी।

महाभारत काल में बुन्देलखण्ड के उत्तरी पूर्वी भाग में कारूष राज्य था, जिसकी राजधानी कारूषपुरी (कर्वी) थी। अवध के राजा करम ने कलिंजर दुर्ग का निर्माण कराकर चेदि देश की राजधानी चंदेरी पर अपना अधिकार कर बूढी चंदेरी से कुछ दूर नयी चंदेरी की स्थापना की थी।

मौर्य काल – (322 ई.पू. से 184 इ.पू.) :–

मौर्यकाल (322 ई.पू. से 184 ई.पू.) के पूर्व ब्राह्मण धर्म के विरोध में दो नए संप्रदाय जैनधर्म एवं बौद्धधर्म उद्भूत हुए थे, जिससे राष्ट्रीय एकता विखंडित हुई और 16 महाजनपदों में राष्ट्र विभक्त हो गया था। उनमें से एक कन्नौज के पांचालों का था, जो बुन्देलभूमि में सिंध नदी से केन नदी

तक था। मौर्य सम्राट अशोक की ससुराल इसी भूमि (विदिशा) में थी। अशोक के प्रभाव के कारण बुन्देलखण्ड में भी बौद्धधर्म का प्रचार हुआ था, जिसके उदाहरण गुजर्रा ग्राम (दतिया) एवं रूपनाथ (जबलपुर) के बौद्ध शिलालेख हैं।

मगध राज्य के शासक चंद्रगुप्त ने अपने राज्य के आसपास के कई जनपदों को अपने अधिकार में कर लिया जिससे अन्य जनपदों के राजाओं को भी चंद्रगुप्त के राज्य में मिल जाना पड़ा। चंद्रगुप्त मौर्य के साम्राज्य में नर्मदा के उत्तर का संपूर्ण भाग आ गया था। इस कारण बुन्देलखण्ड का परिक्षेत्र भी चंद्रगुप्त के साम्राज्य में था।

अशोक बौद्ध धर्म ग्रहण करने के बाद उसने सांची और भरहुत में स्तूप बनवाए तथा जबलपुर के रूप नाथ एवं दतिया के गुर्जरा ग्राम में बौद्ध शिलालेख उत्तीर्ण करवाए। किन्तु मौर्य साम्राज्य के पतन पर त्रिपुरी, एरण, विदिशा चेदि जनपद फिर स्वतंत्र हो गये।

गुप्तकाल (290ई.—400ई.) :—

बुन्देलखण्ड का दक्षिणी पूर्वी क्षेत्र तो गुप्त राजाओं के प्रत्यक्ष शासन में था जिसका मुख्यालय एरण में स्थित था और उस शेष बुन्देलखण्ड उनके रिश्तेदारों नागों और वाकाटकों के अधीन था।

समुद्रगुप्त ने पद्मावती के राजा गणपति नाग को अपने अधिकार में करके अपना माण्डलिक नियुक्त कर दिया था। झांसी और ग्वालियर के मध्य आभीर लोग निवास करते थे इन्हें भी समुद्र गुप्त ने अपने अधिकार में कर लिया था इस भाग को अहीरबाड़ा कहते है।

स्कन्द गुप्त की मृत्यु के 4 वर्ष पश्चात् जब तोरमाण एरन आया उस समय एरन प्रांत स्कंद गुप्त के भाई बंध बुध गुप्त के अधीन था लेकिन बुध गुप्त की ओर से यहॉ सुरश्मि चन्द्र नामक माण्डलिक यमुना और नर्मदा के

मध्य प्राप्त का प्रशासक था और सुरश्मि चंद्र की ओर ऐरन का राज्य संचालन करने के लिए बाहम्ण मातृ विष्णु और धान्य विष्णु नियत थे। इन्हीं के समय तोरमाण ने संवत् 542 विं. में अपना आधिपत्य बुन्देलखण्ड पर जमाया। एरन के बाराह बक्षस्थल में इसका उल्लेख हुआ है। ऐरन में मातृ में मातृ विष्णु द्वारा बनवाए स्तम्भ से ज्ञात होता है कि मातृविष्णु गुप्त लागों के अधीन था। परन्तु उसका भाई धान्य विष्णु तोरमाण का आधिपत्य स्वीकार करके उसके अधीन हो गया था।

कलचुरी राज्य (550ई.–1200ई.) :–

कलचुरी राजवंश हैह्य क्षत्रिय, चेदि कलार, राय, शिवहरे, टंडन इत्यादि विभिन्न नामों से पुकारा जाता है। रामायण काल में सहस्त्रार्जुन, महाभारजत काल में हैदय, शिशुपाल, शंकर का वरदान प्राप्त त्रिपुरी इत्यादि इसी वंश के थे। बुन्देलखण्ड में इनके दो केन्द्र थे पूर्वी बुन्देलखण्ड में त्रिपुरी और दक्षिणी पश्चिमी बुन्देलखण्ड में चॅदेरी। कलचुरियों की राजधानी महिस्मती (महेश्वर) रही। यह मालवा के भोज परमार और बुन्देलखण्ड के चंदेल राजवंशों के समकालीन रहे है।

कलचुरी वंश के प्रथम शासक बामराज देव को विद्वानों ने सातवीं शताब्दी के अंत में माना है। बामदेव ने डाहल की सीमा पर स्थित कालिंजर पर अधिकार कर लिया था। कालांतर में इस वश के लक्ष्मण देव के उपरान्त युवराज कोकल्लदेव द्वितीय गंगाय देव (1019–41), कणदेव (1941–101,25)यश कर्ण, जय कर्ण, नरसिंह देव, जयसिंह देव, एवं विजय सिंह कलचुरि सिंहासन रूढ हुए थे।

चंदेल राज्य :–

चंदेल यदुवंशी थे। इसके कुलदेव चंद्र बताये जाते हैं। यदुवंश की अनेक पीढ़ियों बाद दमघोष हुआ था। उसका पुत्र शेषपाल तथा शेषपाल का पुत्र चन्द्रब्रह्म था। इसने एक विशाल महोत्सव किया था। जिस स्थान पर यह

महोत्सव हुआ था उसी का नाम महोबा पड़ गया था और चन्द्रब्रह्म के वंशज चंदेल कहे जाने लगे। चन्द्रब्रहम् के पश्चात् का कुछ समय का इतिहास अनुपलब्ध है किन्तु इस वंश के नन्नुक देव से स्पष्ट इतिहास प्राप्त होता है। कालचक्र की दृष्टि से यदि अवलोकन किया जाय तो बुन्देलखण्ड के वृहत् क्षेत्र पर दीर्धकालीन शासन परम्परा में केवल दो ही राजवंशों को इतिहास में अमरता प्राप्त करने को गौरव प्राप्त हुआ है। इनमें से एक चंदेल और दूसरा बुन्देलों का है। विश्वप्रसिद्ध खजुराहों के मंदिर भी चंदेलकालीन है।

नन्नुक देव (800–825 ई.) :–

इसने पड़िसरों को मऊ के युद्ध में परास्त किया था, जिससे कुछ धसान नदी के पश्चिम की ओर चले गये थे और कुछ दक्षिण की ओर आये जो लोग दक्षिण की ओर आए उन्होंने प्राचीन तेली राजा को परास्त कर अपना राज्य स्थापित किया और उचेहरा को राजधानी बनाया इसी युद्ध से चंदेलों के राज्य की नींव पड़ी। डॉ. बोस ने नन्नुक को चंद्रवंश का प्रथम ऐतिहासिक सम्राट कहा है।

जय शक्ति विजय शक्ति (850–857ई.) :–

ये दोनां वाक्पति के पुत्र थे। वाक्पति की मृत्यु के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र जय शक्ति सिंहासन पर बैठा। उसे जेजा भी कहते है। जय शक्ति के पुत्र न था उसकी पुत्री नट्टा देवी का विवाह कलचुरी राजा को लल्ल देव से हुआ था। जय शक्ति ने जिस भू भाग पर शासन किया वह जैजाक भुक्ति के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

जय शक्ति के निधन के पश्चात् उसका छोटा भाई सिंहासन रूढ़ हुआ। उसने बंगाल के राजा देव पाल से मित्रता कर संपूर्ण बुन्देलखण्ड पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया।

बारीगढ़ का विजय दुर्ग विजय शक्ति ने बनवाया था, जिसे 1746 ई. में जयाजी शिंदे ने तोड़ डाला था।

यशोवर्मन (825ई.–40ई.) :–

हर्ष की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र यशोवर्मन सिंहासनारूढ़ हुआ। इसके दो विवाह हुए थे। उसकी एक रानी का नाम नर्म्म देवी और दूसरी का नाम पुष्पा था। चन्द्रवंशीय प्रारंभिक शासन नन्हुक, राहिल, वाक्रशक्ति, जय वर्मन, विजय वर्मन एवं हर्ष ने प्रतिहारों के सामन्त के रूप में बुन्देलखण्ड में शासन किया लेकिन जब यशस्वी शासक यशोवर्मन हुआ तो उसने प्रतिहारों की सामंतशाही जंजीरों का तोड़कर स्वतंत्र शासन की स्थापना की थी जो तेरहवीं शताब्दी तक की दीर्धवधि तक चलता रहा। उसने तत्कालीन खस, मालव, चेदि, कुरू, गुर्जर, प्रतिहारों को जीतकर कालिंजर के कलचुरियों को परास्त कर और उनसे कालिंजर ले लिया था। वह कन्नौज के राजा को हराकर वहां से विष्णु की प्रतिमा छीन लाया था। खजुराहो शिलालेख से 1011 के अभिलेख में उसकी विजयों का उल्लेख ह। यशोवर्मन ने अपने राज्य की सीमाएँ उत्तर में यमुना से लेकर दक्षिण में नर्मदा तक पहुँचा दी थी।

घंगदेव (940–999 इ.) :–

यशोवर्धन की मृत्यु के बाद उसका पुत्र घंगदेव सिंहासन पर बैठा। धंग को अनेक इतिहासकारों ने नंद कहा है। धंगदेव शैवमत का उपासक था। उसक शासनकाल में कपिलनाथ मंदिर मडपुरा (समथर) कपिलनाथ मठ, महेबा (ओरछा राज्य) शिवमंदिर मतंगेश्वर, नॉदचॉद पुरा (पन्ना), स्वर्गेश्वर महादेव, सर्वेश्वर, गुप्तेश्वर, महादेव मठ, मऊ(छतरपुर), शिवमठ–टोला, चंदेरी, नारायणपुर, जसबंत नगर, भेलसी, देरी, कोटरा, बड़ागांव घसान(टीकमगढ) निर्मित हुए थे, जो चंदेलों के स्थापत्य कला के अद्‌भुत चमत्कार बने हुए है। खजुराहों एवं छतरपुर के सूर्य मंदिर राजा घंगदेव ने बनवाए थे।

घंगदेव ने प्रतिहार, अंग, राधा कौशल आंध्र और कुचल पर आक्रमण कर चंदेलों की कीर्ति का विस्तार किया था।

गोड़वाना राज्य (गौड़ राज्य) :–

गौड़ चन्द्रवंश के क्षत्रिय थे। गोड़ों की राजधानी सबसे पहले गढ़ा (जबलपुर) मंडला में थी। गोडवाना राज्य विस्तृत भू–भाग में फैला था। बुन्देलखण्ड में यह राज्य धसान नदी से नर्मदा के मध्यपूर्वी दक्षिणी भाग में था। पूर्वकाल में गोड़ लोगों का राज्य उत्तर में देवगद और दुहाही तक पहुंच गया था। संपूर्ण गोड़वाना राज्य 52 सूबों में विभक्त था और प्रत्येक सूबों में 350 से 750 तक ग्राम थे।

गढ़ामण्डल के मोतीमहल शिलालेख की वंशावली तथा रामनगर में प्राप्त वंशावली के अनुसार यादव राज 664ई. से अजर्फनदास 1491ई. तक 40 राजाओं ने राज्य किया था। अर्जुनदास की मृत्यु के बाद अमानदास उर्फ संग्रामसिंह 1491ई. में गढ़ा का राजा हुआ था।

दलपत शाह (1541–1548ई.) :–

अपने पिता संग्रह शाह की मृत्यु के पश्चात् राजा हुआ था, दलपत शाह का विवाह चंदेल राजा की कन्या दुर्गावती से हुआ था विवाह के 4 वर्ष बाद दिवंगत हो गया।

रानी दुर्गावती (1548–1563ई.) :–

पति की मृत्यु के उपरांत एवं पुत्र वीर नारायण अल्पवयस्क होने के कारण स्वयं शासन संचालन किया। उसके राजकोष में असंख्य धन था तथा प्रजा धन–धान्य से सम्पन्न थी।

रानी दुर्गावती की मृत्यु के पश्चात् दलपत शाह के छोटे भाई चंद्रशाह ने (1564–65ई.) तक, चंद्रशाह के छोटे पुत्र मधुकर शाह (1575–1590)तक, मधुकर शाह के पुत्र प्रेमनारायण(1590–1632ई.) तक, प्रेमनारायण के पुत्र हृदयशाह(1633–1704ई0) तक, इसके पश्चात् छत्रशाह (1704–1711ई.) तक,

केशरीसिंह ने (1711–1722ई.)तक, नरिन्द्रशाह (1723–1731ई.)तक, महाराज शाह (1732–1743ई.), शिवराज शाह (1743–1750ई.) तक, दुर्जन शाह (1750–1751ई.) तक, निजाम शाह ने (1771–1774ई) तक, तथा नरहरशाह ने (1771–1774ई.) तक शाह शासको ने शासन किया।

बुन्देलखण्ड के बुन्देला राज्य :–

(1) ओरछा राज्य :– रूदुप्रताप सिंह–रूद्रप्रताप (1501–1531ई.) ओरछा राजवंश के आदि पुरूष माने जाते है। वह सिकन्दर लोदी (1489–1517), इब्राहिम लोदी (1517–26) और मुगलवंश संस्थापक सम्राट बाबर (1526–30ई.) के समकालीन थे। उन्हांने इब्राहिम लोदी के समय सवा करोड का विशाल बुन्देला राज्य स्थापित कर लिया था जो कालिंजर से काल्पी तक फैला हुआ था। ओरछा का प्राचीन नाग गंगापुरी था जो पड़िहारो की राजधानी थी 1–58 रूद्रप्रताप ने नहर की सुरक्षा के लिए 12 मील के विस्तार में नगर कोट का निमाण कराया और भव्यराज प्रसाद तथा अन्तःपुर के नाम पर एक भव्य आकर्षण नौ चौकियों नामक महल का निर्माण कराया।[55]

भारती चन्द्र(1531–54 ई.) – रूद्रप्रताप की मृत्यु के पश्चात उनके ज्योष्ठ पुत्र भारती चंद को ओरछा की गद्दी मिली। उन्होंने सिंध से टमस तथा यमुना से नर्मदा के मध्य बाला दो करोड रूपया वार्षिक आय का ओरछ राज्य बना लिया था। भारती चंद के एक पंत्र पैदा हुआ था जो उनके जीवनकाल में ही कर गया था। 1554 ई0 में उनका निधन ओरछा में हो गया था।

मधुकरशाह (1554–92ई.) – ये भारती चंद के भाई थे। ओरछा राज्य के राजा बनने के पहले ये शिवपुरी के जागीरदार थे। ये कृष्ण उपासक थे जबकि उनकी महारानी गणेश कुंवर राम उपासक थी। मधुकर शाह मथुरा से राजा माधव और जुगलकिशोर की मूर्तियां ओरछा लाये थे तथा रानी गणेश कुंवर अयोध्या से भगवान रामराजा की मूर्तियॉ लाई थी जो अभी भी रामराजा मंदिर

ओरछा में विराजमान है। सन् 1592ई. में इनका स्वर्गवास हो गया। मधुकरशाह के आठ पुत्र थे जिन्हें निम्न प्रकार व्यवस्थित किया गया था।

(1) रामशाह ओरछा के राजा हुए, (2) होरलदेव को पिछोर की जागीर, (3) झुजीत को कछौआ (4) वीरसिंह को बडौनी (5) हरिसिंह देव को भसनेह (6) प्रताप राव को कौंच पहारी (7) रतन सिंह को गौर झाव (8) रनधीर सिंह को शिवपुर की जागीर दी गयी थी। लेकिन कुछ समय बाद यह सभी अपने को स्वतंत्र राजा मानने लगे थे।

मधुकर शाह अपने धर्म के बड़े आस्थावान और मुगल शासकों के विरोधी रहे इस कारण अपने आत्मसम्मान और धर्मरक्षा के लिए मुगलों से अनेक युद्ध करना पड़े।[57]

रामशाह (1592–1605ई.) :– रामशाह अपने अधीनस्थ जागीरदारों को दबा न सका। वे स्वतंत्र हो गये और ओरछा रियासत में 22 जागीरें हो गयी। इनमें से 7 वे इन्ही के भाई बंधु थे और अन्य 15 में परमार, कछवाह और गौड़ थे। अकबर के बाद जहांगीर ने वीरसिंह देव को ओरछा की गद्दी दे दी और रामशाह को चंदेरी और बानपुर की जागीर दे दी।

वीरसिंह देव प्रथम (1605–27ई.) :– वीरसिंह देव अत्यंत प्रतिभाशाली साहसो और पराक्रमी योद्धा थे। ये कुशल राजनीतिक, उदार, न्यायशील, यशस्वी, बुन्देली स्थापत्य कला के प्रणेता एवं साहित्यकारों के आश्रयदाता थे। संपूर्ण बुन्देलखण्ड एवं कुछ पश्चिम में व होलखण्ड उनके शासन के अंतर्गत था। जिसमें 81 परगने 12500 ग्राम थे जिनकी 2 करोड़ रूपय वार्षिक आय थी। वीरसिंह देव ने ओरछा को पुनः बनाया और उसका नाम जहॉगीर पुर रख दिया था। ओरछा के राजा वीरसिंह देव बड़े योग्य शासक थे बामौनी झांसी और दतिया के किले इन्हीं के बनवाए हुए है। दतिया के किले को बनवाने में 8 वर्ष 10 माह 26 दिन लगे थ और 32 लाख नब्बे हजार नौ सौ अस्सी रूपये

खर्च हुये थे। सन् 1627 ई0 में 61 वर्ष की आयु में वीरसिंह देव का स्वर्गवास हो गया था।

जुझार सिंह (1627–34ई.) :– वीरसिंह देव के 12 लडकों में से जुझार सिंह सबसे बड़ा था यही सिंहासनारूढ़ हुआ लेकिन यह अत्यंत अभिमानी और संदेहशील था वि.सं.1685 में यह अपने विमाल हरदौल से किसी कारण अप्रसन्न हो गया 28 अक्टूबर 1628 को जहॅागीर की मृत्यु होने पर खुर्रम शाहजहॉ के नाम से मुगल सम्राट बना। सन् 1662 ई0 में जुझार सिंह दक्षिण से ओरछा लौट रहे थे उन्होंने मार्ग से चौरा गढ बुर्रा पर आक्रमण कर राज्य प्रेमशाह और मंत्री जयदेव को मार डाला और उसका किला चौरागढ़ अपने राज्य में ले लिया।

प्रबंधक देवी सिंह चंदेरी (1634–36ई.) :– जुझार सिंह की मृत्यु के पश्चात शाहजहां ने चंदेरी को ओरछा का प्रबंधक बना लिया और तब औरंगजेव ओरछा आया उसने अनेक भवनों और चतुर्भुज मंदिर के अग्रभाग को गिरवा दिया। जब बुन्देला जागीरदारों ने देवीसिंह का विरोध करके जुझार सिंह के अल्पायु पुत्र पृथ्वीराज को राजा बनाने का निश्चय किया तब राजा देवी सिंह ओरछा छोडकर चंदेरी चले गये।

पहाड़सिंह (1641–53ई.) :– शाहजहॉ के द्वारा पहाडसिंह को ओरछा का राज देने के बाद सं. 1708 में चौरा की जागीर भी दे दी गयी साथ ही उसका एक हजारी मनसव भी बढाया गया।

पहाड़ सिंह के पश्चात् सुजान सिंह ने 1653–72ई तक इंद्रमणि ने 1672–75ई. तक, यशवंत सिंह ने 1675–84ई. तक भगवंत सिंह 1684–89ई. तक, उदोतसिंह 1689–1786ई. तक पृथ्वीसिंह ने 1736–53ई. तक, सामंत सिंह ने 1753–65ई. तक हरी सिंह 1765– 67ई. तक, पजन सिंह 1767–72ई. तक, मानसिंह 1772–75 इ. तक, भारती चंद ने 1775–76ई. तक 1765 से

1775ई. तक 10 वर्ष के मध्य 4 अस्थिर राजा हुये जो मरोठो के आक्रमण का सामना करने में सक्षम न हुये, विक्रमाजीत सिंह 1776–1817ई. तक धर्मपाल सिंह 1817–34ई, तेजसिंह 1834–41ई. तक, सुजान सिंह द्वितीय ने 1841–54ई. तक समीर सिंह 1854–74ई. तक, प्रताप सिंह 1874–1930ई. तक, ततपश्चात वीरसिंह देव द्वितीय ने 1930 से 1956ई. तक बुन्देला शासकों ने ओरछा राज्य पर राज किया।

चंदेरी बानपुर – सन् 1609ई. में मुगल सम्राट जहॅागीर ने महाराज वीरसिंह देव (प्रथम) के भाई रामशाह को बार की जागीर प्रदान की थी। 1612ई. में उनकी मृत्यु हो गयी।

दतिया राज्य :– ओरछा के राजा वीरसिंह देव पथम (1605–27) के 12पुत्रों में से एक पुत्र भगवान दास थे जिन्हें पलेरा की जागीर प्राप्त हुई थी। सन 1826 में जब भगवान दास आगरा से लौंटे तो उनके पुत्रों ने पलेरा में प्रवेश न करने दिया।

पारिवारिक कलह टालने के उद्देश्य से वीरसिंह देव ने बडौनी जागीर खर्च के लिए दतिया का अपना महल निवास के लिए और 4 सरदार 300 घुडसवार रक्षा के लिए देकर दतिया भेज दिया। आगे चलकर उन्होंने अपनी जागीर का विस्तार सिन्ध से बेतवा तक कर लिया सन् 1655 में भगवान दास की मृत्यु हो गयी।

भगवान दास की मृत्यु के पश्चात् उनके पुत्र शुभकरण ने (1655–83ई0) तक, शुभकरण के बड़े पुत्र दलपत राव ने (1683–1707) दलपत राव के पश्चात उनके पुत्र भारती चंद ने (1707–1711ई. तक) तत्पश्चात रामचंद्र ने (1711–1736ई.), इंद्रजीत सिंह ने (1736–1762इ) शत्रुजीत सिंह ने (1763–1801ई.), पारीछत ने (1801–1839ई.) विजय बहादुर (1839–56ई.)भवानीसिंह ने (1857–1907ई.) ततपश्चात गोविंन्द सिंह ने (1907–1952ई.) तक दतिया राज्य पर शासन किया।

पन्ना राज्य :– हृदयशाह (1732–39ई.) अपने पिता छत्रसाल के समय गढ़ाकोटा में रहा करते थे जिसके पास उन्होंने हृदय नगर ग्राम भी बसा लिया था। ये विलासी प्रवृत्ति के राजा थे। हृदयशाह क पश्चात् सभासिंह (1739–52ई.), अमानसिंह ने (1752–58ई.), हिन्दूपत ने (1758–76ई.), अनिरूद्ध सिंह ने (1776–80ई.), घोकल सिंह ने (1758–98ई.), किशोरी सिंह ने (1798–1834ई), हरवंशराय (1834–49ई.) नृपतिसिंह (1849–70ई.), रूद्रप्रताप (1870–93ई.), लोकपाल सिंहने (1893–97ई.), माधवसिंह ने (1897–1902ई.), तक आर यादवेन्द्र सिंह ने (1902–64 ई.) तक पन्ना राज्य में शासन किया।

जैतपुर राज्य :– पन्ना के महाराज छत्रसाल ने बॅटवारे में जैतपुर राज्य अपने द्वितीय पुत्र जगतराज (1732–48ई.) को दिया था, जगतराय की मृत्यु के पूर्व ही उनके ज्येष्ठ पुत्र कीरत सिंह को जैतपुर का राज्य और शेष पुत्रों को जागीरें दी गई थी।

सन् 1758 में जगतराज की मृत्यु के पश्चात् कीरत सिंह के छोटे भाई पहाड़सिंह ने राज्य के कामदारों एवं सैनिकों को अपने पक्ष में भर जैतपुर गद्दी पर अधिकार कर लिया। सन् 1765ई. में पहाड़सिंह की मृत्यु के पश्चात गजराजसिंह ने 1765 से 1789ई. तक, केशरीसिंह ने 1789 से 1813ई. तक, पारीछत ने सन् 1813 से 1843ई. तक शासन किया इसके पश्चात सन् 1843 में राज्य से च्युत कर देने के बाद जैतपुर राज्य धुन्धासिंह के नाती लक्ष्मण सिंह के पुत्र खेतसिंह को रतनसिंह की अनुशंसा पर दे दिया गया था। सन 1849ई. में खेतसिंह के निःसंतान निधन होने पर कंपनी सरकार ने उत्तराधिकारी के अभाव में जैतपुर राज्य का विलय कंपनी राज्य में कर दिया था।

अजयगढ़ राज्य :– जैतपुर के राजा पहाड़सिंह ने बॉदा अजयगढ़ का भू–भाग अपने भतीजे गुमानसिंह को दे दिया था। कालान्तर में ग्रह कलह के कारण गुमान सिंह ने बॉदा का भू–भाग भतीजे वखत सिंह को दिया था। बखत सिंह

ने अपना शासन सन् 1792ई. से 1837ई. तक चलाया इसके पश्चात् माधवसिंह ने सन 1837ई. से 1849ई. तक महीपत सिंह न सन् 1849ई. से सन् 1853ई. तक, विजय सिंह ने सन् 1853ई. से 1855ई. तक अजयगढ राज्य में शासन किया। सन् 1855ई. से 1858ई. तक राज्य में अशांति रही तत्पश्चात् विजय सिंह के पिता महीपत सिंह की रानी के कथनानुसार रंजोर सिंह को अजयगढ का राजा स्वीकार किया गया। राजा की अल्पवयस्क अवस्था के कारण रानी महीपत सिंह को संरक्षक बनाया गया। रंजोर सिंह ने सन् 1859ई. से 1918ई. तक ततपश्चात रंजोर सिंह के पुत्र भोपाल सिंह ने 1818ई. से 1841ई. तक तथा सन् 1841 से 1858ई. तक पुण्यपाल ने अजयगढ राज्य में शासन किया।

चरखारी राज्य – चरखारी नगर का विकास जैतपुर के राजाजगतराय (1732–58) के समय हुआ था। उनके पश्चात् कीरतसिंह के द्वितीय पुत्र खुमान सिंह को चरखारी क्षेत्र का राज्य 1765ई. में दिया गया। खुमान सिंह ने 1765ई. से 1782ई. तक ततपश्चात् विजय बहादुर ने सन् 1782ई. से 1829ई. तक तथा रतनसिंह ने सन् 1829 से 1862ई. तक तक चरखारी राज्य में शासन किया।

बिजावर राज्य – जैतपुर के संस्थापक राजा जगतराय के पुत्र पहाड़सिंह ने भाई वीरसिंह को विजावर का 1 लाख रूपया का भू–भाग दिया था, वीरसिंह की मृत्यु के पश्चात सन 1793ई. से 1810 इ. तक केशरी सिंह ने, सन् 1810ई. से 1833ई. तक रतन सिंह ने सन 1833ई. से सन् 1847ई. तक लक्ष्मण सिंह ने सन 1847ई. से 1899ई. तक भानुप्रताप सिंह ने, सन् 1899 से 1940ई. तक सावंतसिंह ने तथा 1940 से 1983ई. तक गोविन्द सिंह ने बिजावर राज्य में शासन किया।

शाहगढ़ राज्य :– सन् 1744ई. में पृथ्वीराज ने (1744ई. सन् 1772ई.) अपने भाइ पन्ना के राजा सभा सिंह (ह्रदयशाह के पुत्र) से तीन लाख रूपये देकर शाहगढ क्षेत्र प्राप्त कर शाहगढ राज्य स्थापित किया था। तत्पश्चात पृथ्वोराज के पुत्र हरीसिंह ने सन् 1772ई. से 1785ई. तक, मर्दन सिंह ने सन् 1785 से

1810 ई. तक, अर्जुन सिंह ने सन् 1810 से 1842 ई. तक एवं बखतवली सिंह ने सन् 1842 से 1858ई. तक शाहगढ़ राज्य का शासन किया।

सागर राज्य :– सन् 1735 में बाजीराव पेशवा ने छत्रसाल से बुन्देल खण्ड का तृतीयांश लेकर अपने निर्भीक और बलवान रसोइए रत्नगिरि जिले के नेवरे ग्राम के कराणे ब्राहम्ण गोविन्दराव बल्लाल खैर को बुन्देलखण्ड के मराठी भू–भाग का सूबेदार नियुक्त किया था।

सागर राज्य में गोविन्द बल्लाला खैर ने सन् 1735 से 1761 ई. तक, बालाजी गोविन्द ने 1762ई. से सन् 1800ई. तक, रघुनाथ राव आबा साहब ने सन् 1800 से सन् 1802ई. तक बलवंतराव बाबा साहब ने सन् 1802 से 1818ई. तक शासन किया। बलबंत राव के पश्चात् 11 मार्च 1818ई. को विनायक राव ने आत्मसमर्पण कर दिया कंपनी सरकार ने सागर का विलय अपनी राज्य में कर लिया।

झॉसी राज्य :–मराठों और बुन्देलों के मध्य समझौता हुआ इसके फलस्वरूप झॉसी बरूआ सागर, तथा मऊरानीपुर के क्षेत्र मराठों को प्राप्त हो गये।

नारोशंकर के पश्चात् सन् 1757ई. में रघुनाथराव हरी निवालकर झॉसी के सूबेदार हुये। रघुनाथ राव के निधन के पश्चात् उनके छोटे भाई शिवराज भाऊ ने 1794 से 1815ई. तक, रामचन्द्र राव ने सन् 1815 से 1835ई. तक, रघुनाथ राव ने सन् 1835 से 1838ई. तक एवं कोर्ट ऑफ वार्डस ने 1832 से 1842ई. तक झॉसी पर राज्य किया।

सन् 1851 में 16 वर्ष की आयु में लक्ष्मीवाई के एक पुत्र हुआ जो तीन माह पश्चात् स्वर्गवासी हो गया। वृद्धावस्था में पुत्र शोक के कारण अस्वस्थ गंगाधर ने भविष्य में गद्दी की उत्तराधिकारी के लिये 20.11.1953 को झांसी के राजनीतिक प्रतिनिधि मेजर एलिश के समक्ष अपनी सौतेली सास चिमणाबाई के भाई आनंदराव वासुदेव गुरसराय वालों को जो वासुदेव शिवराम निवालकर के पुत्र थे। जिन्हें गोद लिया था और पुत्र का नया नाम

दामोदर निवालकर रखा गया था। 21.11.1953 को गंगाधर का स्वर्गवास हो गया।

लक्ष्मीबाई ने लार्ड डालहौजी से दामोदर राव को झांसी का राज्याधिकारी स्वीकार करने का आवेदन दिया जिसे लार्ड डलहौजी ने अस्वीकार कर झॉसी का विलय कम्पनो राज्य में कर लिया।

जालौन (काल्पी) :– सागर के सूबेदार गोविन्द बल्लभ खैर की ओर से उत्तरी– पश्चिमी बुन्देलखण्ड के राजाओं से चौथ वसूल करने हरी विठ्ठल विछूंरकर भी थे इन सरदारों ने जालौन काल्पी, हमीरपुर क्षेत्र से 96 लाख रूपया गोविन्द बल्लभ खैर ने दिया था। सन् 1761ई. में पानीपत के तृतीय यृद्ध में अफगानों ने गोविन्द बल्लाल को मार डाला तब बालाजी गोविन्द सागर के तथा छोटे पुत्र गंगाघर गोविन्द काल्पी के सूबेदार बन गये।

गंगाधर गोविन्द ने सन् 1761 से सन् 1800ई. तक, गोविन्द गंगाघर उर्फ नाना साहब ने सन् 1800ई. तक गोविन्द गंगाधर उर्फ नाना साहब ने सन् 1800ई. 1822ई. तक एवं बालाजी गोविन्द ने सन् 1822ई. से 1832ई. तक काल्पी राज्य पर राज किया।

बॉदा राज्य :– सागर के सूबेदार गोविन्द बल्लाल खैर की ओर से हमीरपुर के कुछ भाग सहित बांदा परिक्षेत्र में कृष्णा अनंत ताम्बे नियुक्त था। सन् 1766–67 में हिम्मत बहादुर गुसाई ने लखनऊ के नबाव शुजाउद्दौला से करीम खॉ के नेतृत्व में सैनिक सहायता प्राप्त कर बॉदा पर आक्रमण कर दिया। पेशवा माधवराव नारायण राव ने बुन्देला राजाओं पर नियंत्रण स्थापित करने के लिये अली बहादुर को 1789ई. में बॉदा का नबाव बनाकर भेजा था। उसने हिम्मत बहादुर गुसाई को राज्य देने का लालच देकर अपने पक्ष में कर दोनों ने संयुक्त रूप से बॉदा पर आक्रमण कर गुमान सिंह को पराजित कर दिया और बॉदा को अपना ठिकाना बनाकर, पन्ना, बिजावर, चरखारी, अलीपुर, जैतपुर इत्यादि राज्यों पर आक्रमण कर अपने अधीन कर भारी कर बसूल किये।

अलीबहादुर की मृत्यु के पश्चात जुल्फिकार अली को बांदा का नबाव घोषित कर दिया सन् 1849ई. में जुल्फिकार अली की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र अली बहादुर नबाव हुआ था।

छतरपुर राज्य :– इस राज्य की स्थापना सोने जू ने 1785ई. के मध्य की थी। सन् 1790–93 के भव्य मराठा सूबेदार अलीबहादुर और उसके सहायक हिम्मत बहादुर के आक्रमणों से उत्पन्न अराजकता का लाभ उठाकर प्रताप सिंह जू ने पन्ना, विजावर एवं चरखारी राज्यों की थोड़ी–थोड़ी भूमि अधिकार में करके राज्य का विस्तार कर लिया।

छतरपुर राज्य में प्रताप सिंह ने सन् 1816 से 1854ई. तक, जगतराय ने सन् 1854ई. से 1867ई. तक, विश्वासनाथ सिंह ने सन् 1867 से 1932ई. तक एवं भवानी सिंह ने सन् 1932ई. से 1948 तक शासन किया। 19.04.1948 को इस राज्य का विलय विन्ध्यप्रदेश में किया गया।

नौगवां रिबई राज्य – यह यादव राज्य जैतपुर के छुटई स्टेशन के निकट था जिसका संस्थापक अराजक किलेदार लक्ष्मण सिंह दौआ था जिसे केशरी सिंह ने अजयगढ का किलेदार बना दिया था।

तत्पश्चात् जगत सिंह ने सन् 1809 से 1867ई. तक, सवाई लाड़ली दुलैया ने सन् 1867ई. तक 1882 ई. तक, विश्वनाथ सिंह ने सन् 1882ई. से 1937ई. तक एवं रतन सिंह ने सन् 1937 से 1948 तक नौगवां रिबई राज्य का शासन किया।

गौरिहार राज्य :– अजयगढ के राजा गुमान सिंह के समय पं. राजाराम तिवारी भूरागढ़ के किलेदार थे। राजाराम तिवारी बाद में गुमान सिंह से बिगड़कर धीरे धीरे स्वतंत्र हो गये तत्पश्चात राजघर रूद्रसिंह ने सन् 1846 से 1877ई. तक, राजबहादुर श्यामले प्रसाद ने सन् 1877 से 1904ई. तक, अतिपाल सिंह ने सन् 1904 से 1935 ई. तक एवं अवधेन्द्र प्रताप सिंह ने सन् 1935 से 1948 तक गौरिहार राज्य का शासन किया।

कालिंजर के चौबयाना राज्य :— पन्ना के राजा सरमेद सिंह के समय में कलिंजर में राम किसुन चौबे किलेदार थे। बाद में वे यहॉ के स्वतंत्र राज्य बन बैठे। यह जुझौति ब्राह्मण थे। इनकी प्रवृत्त उदण्ड और अराजक थी। कालान्तर में यह राज्य रामकृष्ण चौबे के सात पुत्रों तथा एक भाग परिवार के कामदार गोपाल लाल कायस्थ सहित आठ भागों में विभाजित कर दिया गया।

बुन्देलखण्ड का राजनीतिक इतिहास

बुन्देलखण्ड का क्रमबद्ध इतिहास मौर्य साम्राज्य के साथ आरम्भ होता है। मौर्यवंश में चन्द्रगुप्त मौर्य बिन्दुसार और अशोक का नाम उल्लेखनीय है। मौर्य साम्राज्य के चार विभाग थे प्रत्येक विभाग की राजधानी में एक शासक होता था। बुन्देलखण्ड उज्जैन के एक शासक के अधीन था। अशोक के शासन काल में धर्म प्रचारार्थ लिखाये गये शिलालेख अब भी इसमें मिलते है।

श्री उमाशंकर शुक्ल के अनुसार जब समुद्रगुप्त दिग्विजय को निकला तो वह सागर जिले से होता हुआ दक्षिण को गया था। हटा तहसील में 24 सोने के गुप्तवंशीय सिक्के और एरन में ''रजभोग नगर'' इस बात के प्रमाण है।

अशोक के पश्चात् मौर्य शासक अपने साम्राज्य की रक्षा न कर सके। पुराणों से ज्ञात होता है कि मौर्यवंश का अंतिम राजा वृहदृथ अपने सेनापति पुष्यमित्र (पुष्यमित्र) द्वारा मारा गया और शुंग वंश की स्थापना हुई।

डॉ. बलभद्र तिवारी ने शुंग वंश का संबंध बुन्देलखण्ड से स्थापित करने हेतु लिखा है—''शुंगवंश भार्गव च्यवन के वंशधर शुनक के पुत्र शौनक से उद्भूत है, ये दक्षिण बुन्देलखण्ड से संबंधित रहे है। शुंग लोग 36 वर्ष ही राज्य कर पाये।

शुंग वंश के पश्चात् बुन्देलखण्ड पर नागों शकों आदि विभिन्न शासकों का शासन रहा। डॉ0 बलभद्र तिवारी के अनुसार —भारतीय तथा

बुन्देलखण्ड के इतिहास में मौर्यो के उपरान्त बाकाटकों और तत्कालीन गुप्तों का महत्वपूर्ण योगदान है।

डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी लिखते है–''बाकाटकों का राजकुल गुप्तों के समकालीन सबसे शक्तिमान राजवंशों में से एक था। उनके अभिलेखों तथा पुराणों से सिद्ध है कि अपने उत्कर्ष के काल में उनका प्रभुत्व संपूर्ण बुन्देलखण्ड, मध्यप्रदेश, बरार, आसमुद्र, उत्तरी दक्षिण (दक्खन) केऊपर था। इसके अतिरिक्त दुर्वल पडोसी राज्यों के ऊपर भी उनका आधिपत्य प्रतिष्ठित था।

सन् 345ई. के पश्चात बाकाटक वंश गुप्तों के प्रभाव में आया। पॉचवी शताब्दी के मध्य तक वाकाटक गुप्तों के आश्रित रहे।

गुप्तों के शासनकाल में बुन्देलखण्ड की सीमाओं में विस्तार हुआ। स्कन्द गुप्त के शासनकाल में ही हूणों के आक्रमण प्रारम्भ हो गये थे। हूणों का भी कुछ समय तक इस प्रदेश पर शासन रहा। हूणों के पश्चात् यशोवर्धन और हर्षवर्धन का शासन है। ''हर्ष के काल में बुन्देलखण्ड ही नहीं उसके द्वारा समस्त शासित भू–भसाग की विशेष उन्नति हुई। चीनी यानी ह्वेनसांग इसी समय में भारत आया था उसने अपनी यात्रा में जुझौति (बुन्देलखण्ड) महेश्वरपुरा और उज्जैन की समृद्धि का अच्छा वर्णन किया है।

हर्ष के पश्चात् उसका राज्य भी छिन्न भिन्न हो गया और समस्त उत्तर भारत छोटे छोटे राज्यों में बंट गया।

हर्ष के पश्चात् बुन्देलखण्ड में कलचरियों और चन्देलों का भी अधिपत्य रहा। ''हर्षवर्धन की मृत्यु के बाद चन्देलों के समय में बुन्देलखण्ड की लाक्षणीय उन्नति हुई। चन्देल शासन के तीन सोपान हैं हर्ष से धंग का उदीयमान शासनकाल धंग से विजयपाल तक समृद्धिपूर्ण शासनकाल तथा विजयपाल से पृथ्वीवर्मा तक पतनोन्मुख काल। चन्देलों का स्वर्णकाल धंग के समय से माना जाता है।

चन्देलों ने विस्तृत भू–भाग पर अपना अधिकार किया। चन्देलों के अर्थात् रहने वाला भाग घसान नदी के पूर्व और विन्ध्यांचल पर्वत के उत्तर पश्चिम में था। उत्तर में यह यमुना नदी और दक्षिण में केन नदी तक फैला हुआ था। चंदेलवंश का शासनकाल नवीं शताब्दी से प्रारम्भ होता है। इस वंश के संस्थापक नानक देव थे। इन्हीं नानुक या नन्नुक का पौत्र जेजा अथवा जयशक्ति था जिसके नाम पर चन्देलों के राज्य का नाम जेजाकभुक्ति पड़ा।

इस वंश में अनेक प्रतापी शासक हुए जिन्होंने बुन्देलखण्ड की प्रगति और विस्तार किया।

कलचुरी राज्य :– चन्देलों के समकालीन राजनीतिक क्षितिज पर अपना महत्व स्थापित करने वाला कलचुरि वंश की उल्लेखनीय है ''कलचुरि–वंश–पुराणों के अनुसार कल्चुरि है। हृयवंशी कार्तवीर्य अर्जुन के वंशज है।'' इसके संस्थापक महाराज कोकल्ल ने जबलपुर के पास त्रिपुरी को अपनी राजधानी बनाया अतएव यह वंश ''त्रिपुरी के कल्चुरि'' नाम से भी विख्यात है।

डॉ. विवेकदत्त झो लिखते है –''हूणों के आक्रमण के दौरान अनेक राजनीतिक सांस्कृतिक केन्द्र नष्ट हो गये। बुन्देलखण्ड में राजनीतिक अस्थिरता का सूत्रपात हुआ। छोटी छोटी रियासतों में विभक्त बुन्देलखण्ड को जिन बाह्य शक्तियों ने पद दलित किया उनमें सम्राट हर्ष, राष्ट्रकूट, दंति दुर्ग और गोविन्द तृतीय के नाम उल्लेखनीय है। अंततः त्रिपुरी के कल्चुरि नरेशों ने बुन्देलखण्ड को राजनीतिक स्थिरता प्रदान की। उन्होंने सांस्कृतिक पुनरूत्थान के सन्दर्भ में उल्लेखनीय कार्य किया।

लगभग तीन सौ वर्षो तक कल्चुरियों का शासन दक्षिणी बुन्देलखण्ड पर रहा, तत्पश्चात चन्देलों की बढती हुई शक्ति से उनका प्रभाव कम होता गया। 12वीं शती में चन्देलों और गाहडवालौ की बढती हुई शक्ति के सामने कल्चुरि वंश के अंतिम राजा नरसिंह (1155ई.), जयसिंह और विजय सिंह (1180ई.) न टिक पाए। 1200ई. में देवगिरि के राजा ने इस वंश का शासन अपने अधीन कर लिया। 14 लेकिन कल्चुरि शासकों का उत्तराधिकारी

तैलोक्यमल्ल 1251ई. तक त्रिपुरी का अधिपति रहा, इस संबध में कुछ विशिष्ट साक्ष्यों की ओर – डां. विवेकदत्त झा ने संकेत किया है वे लिखते हैं – ''झुलपुर ताम्रपत्र द्वारा प्रदत्त सूचनाओं के आधार पर इतिहास में परिवर्तन आवश्यक हो गया है। विजयसिंह देव का उत्तराधिकारी त्रैलोक्यमल्ल 1251 तक त्रिपुरी का अधिपति रहा, यह निर्विवाद है।

वस्तुतः बुन्देलखण्ड के इतिहास में कल्चुरि और चन्देल दोनों ही वंशों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। ''सभ्यता और संस्कृति का इतिहास यह दर्शाता है कल्चुरियों ने साधना, धर्म और चिन्ताधारा के क्षेत्र में अभूतपूर्व परम्परायें स्थापित की थी, जिन्हें बाद में चन्देलों ने और आगे बढ़ाया।

13वीं शताब्दी के अंत तक कल्चुरि और चन्देल दोनों ही प्रभावहीन व शक्तिहीन हो चले।

बुन्देलों का उद्भव और विकास :–

चन्देलों के पश्चात् बुन्देलखण्ड का राजनैतिक इतिहास मुगल सत्ता के उदय और बुन्देलों के उत्कर्ष का इतिहास है।'' विक्रम की चौदहवी शताब्दी में काशी के गहरवार वंश की एक शाखा का प्रादुर्भाव हुआ। इसने पहले जालौन के मुहीनी ग्राम को अपना निवास स्थान बनाया। वहॅा से उन्होंने इतिहास प्रसिद्ध गढकुंडार नामक किले पर अपना अधिकार जमाया। इस तरह उन्होंने ओरछा राज्य की नीव डाली। यह वंश बुन्देला कहलाया। इस वंश की विवध शाखाओं का अधिकार बुन्देलखण्ड के अधिकांश भाग पर अन्त तक बना रहा।

बुन्देलखण्ड के आदि संस्थापक हेमकरण माने जाते है, जो 1100ई. के पूर्व हुए इसी वंश की नवीं या दसवीं पीढ़ी में महाराज रूद्रप्रताप हुए।'' बावर की मृत्यु के लगभग एक वर्ष पश्चात् बुन्देला राजा रूद्र प्रताप ने अप्रैल 1531ई. में बुन्देलों की प्रसिद्ध राजधानी ओरछा की नींव डाली।

महाराज रूद्रप्रताप के पश्चात उनके ज्येष्ठ पुत्र भारती चन्द्र (सन् 1539) न शासन संभाला। इनका शासनकाल 1539 से 1554ई. तक रहा।

इस शासनकाल में भारतीचन्द्र को विभिन्न मुगल शासकों से युद्ध करना पडे, किन्तु अपने भाइयों की मदद से अपनी स्थिति को सुद्रढ बनाये रखा। भारती चन्द्र को अपने राज्य की सीमाओं के विस्तार के लिए उत्तर भारत के मुगल शासकों की प्रतिकूल परिस्थितियों का लाभ भी मिला।

सन् 1954 में भारती चन्द्र की मृत्यु के पश्चात् उनके अनुज ''मधुकर शाह'' ने शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली और कुछ समय पश्चात् 1556 में हुमांयु की मृत्यु के पश्चात् अकबर ने शासन संभाला।

म़गल शासकों की राज्य विस्तार की आकांक्षाएँ बड़ी प्रवल थी। बुन्देलखण्ड पर भी उनके आक्रमण होते रहते थे। मधुकर शाह स्वतंत्रता प्रेमी शासक थे। अन्य बुन्देला शासकों की तरह वे मुगलों की अधीनता स्वीकार करना नहीं चाहते थे। परिणामतः अनेक बार उन्हें मुगल सेना का सामना करना पड़ा। सन् 1573 में सैयद महमूद खॉ के नेतृत्व में मुगल सेना में मधुकर शाह पर आक्रमण किया।

सन् 1577 में अकवर ने सादिक खॉ के नेतृत्व में मुगल सेना ओरछा भेजी। इसी युद्ध में मधुकरशाह के पुत्र होरिलदेव बीर गति को प्राप्त हुए। सन् 1578ई. में मधुकरशाह को अकबर की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी। लेकिन शीध्र ही उनकी मुगल विरोधी कार्यवाहियॉ प्रारम्भ हो गई। परिणाम स्वरूप शहाबुद्दीन, आसकरन, शाहजादा मुराद के नेतृत्व में हुए मुगल आक्रमणों का सामना मधुकरशाह को करना पड़ा। सन् 1591ई. में मालवा के सूबेदार शाहजादा मुराद के आक्रमण के समय मधुकरशाह ने चम्बल के धने जंगलों का आश्रय लिया। सन् 1592ई. के आसपास इनकी मृत्यु हो गई।

मघुकर शाह के होरलदेव, नरसिंह देव, रतनसेन, प्रतापराव, वीरसिंह देव, हरिसिंह देव क्रमशः आठ पुत्र थे। इनमें से बीरसिंह देव की मधुकर शाह

ने 1592ई. में दतिया से लगभग छःमील दूर उत्तर पश्चिम में बडौनी नामक स्थान की जागीर दी।

वीरसिंहदेव की महात्वाकांक्षाओं एवं मुगलशासक विरोधी कार्यवाहियों के कारण भाई रामशाह व सम्राट अकबर से सदा विरोध रहा, लेकिन शाहजादा सलीम का खुदा संरक्षण उन्हं मिला।

शाहजादा सलीम जब जहॅागीर के नाम से सिंहासन रूढ हुआ, तत्पश्चात वीरसिंह देव ने अनेक मुगल अभियानों में वीरतापूर्वक अपना सार्थक सहयोग दिया। ''अंत तक वीरसिंह देव–जहॅागीर के संबंध मधुर बने रहे आर उनकी मृत्यु जून–जुलाई 1627ई. में जहॅागीर कील मृत्यु (अक्टूबर 1627) के तीन चार माह पूर्व हो गई। वीरसिंह देव के पश्चात् उनकी ज्येष्ठ पुत्र जुझार सिंह को ओरछा की गद्दो मिली। ये ग्यारह भाई थे। समस्त राज्य जागीरों के रूप में भाइयों के बीच बट गया।

बुन्देल राजवंश में महाराज चम्पतराय का नाम भी महत्वपूर्ण है। डॉ. तिवारी के शब्दों में ''औरंगजेब की सहायता दारा के विरूद्ध करने पर इन्हें ओरछा के जमुना तक का प्रदेश जागीर में दिया गया। भले ही ये दिल्ली दरबार के उमराव बन गये पर सदैव बुन्देलखण्ड को स्वाधीन कराने में व्यस्त रहे। इसी क्रम में ये औरंगजेब से भिड़ गये। बुन्देलों ने चम्पतराय का साथ नहीं दिया, फलतः बुन्देलखण्ड को शाही सेना द्वारा रौदे जाने पर उन्होंने सन् 1964 में आत्महत्या कर ली।

महाराज चम्पतराय के पश्चात् उनके पुत्र छत्रसाल ने इस राज्य पर शासन किया। चम्पतराय के उपरांत महाराज छत्रसाल की बुन्देलखण्ड की स्वतंत्र सत्ता की हिमायत अविस्मरणीय है।

छत्रसाल ने मुगलों की आधीनता को स्वीकार नहीं किया। औरंगजेब ने छत्रसाल को दबाने की अनेक चेष्टायें की किन्तु सभी चेष्टायें व्यर्थ साबित हुई।

सन् 1707ई. में औरंगजेब की मृत्यु हो गई और बहादुरशाह शासक बना। छत्रसाल के बहादुर शाह से अच्छे संबंध रहे।

छत्रसाल के शासनकाल में ही मराठों का प्रभाव बुन्देलखण्ड पर पड़ने लगा था सन् 1731 में छत्रसाल की मृत्यु के पश्चात् उनका राज्य हिरदेशाह जगतराय और पेशवा बाजीराव में बंट गया। पेशवा को दत्रसाल ने धर्मपुत्र माना था। पेशवा को बुन्देलखण्ड के कालपी, हटा, हृदयनगर, जालौन, गुरसराय, झॉसी, गुना, गढ़ाकोटा, और सागर के तथा अन्य छोटी छोटी जागीरें मिली इस तरह बुन्देलखण्ड में मराठा शक्ति का उदय हुआ।

मराठा शासकों में बाजीराव पेशवा के पश्चात् बाजीराव पेशवा (नाना साहब) गोविन्द राव पंत का प्रभाव पड़ा। अहमदशाह, अबदाली और मराठों के बीच हुए युद्ध में गोविन्द राव पंत की मृत्यु हो गई। उनके पश्चात् वाला जी गोविन्द और गंगाधर गोविन्द ने बुन्देलखण्ड का शासन सम्भाला किन्तु उन्हें सफलता न मिली। मराठा शक्ति का भी क्रमशः हृास होने लगा।

इस बीच अंग्रेजों ने मुगल सत्ता के अपकर्ष, मराठों और बुन्देलों की कमजोर स्थिति को देखते हुए संवत् 1885 में ''कालपी'' पर अपना अधिकार कर लिया। संवत् 1839 में कालपी पर पुनः ''मराठों का अधिकार हो गया। गौड़ शासक भी अपना अस्तित्व बनाये हुये थे। बालाजी गोविन्द ने रधुनाथ राव (अप्पा साहब) को सागर में नियुक्त किया। गौड़ शासकों ने अपने हार हुए प्रदेशों को पुनः जीता।

इन युद्धों में मोरोपन्त और रधुनाथ राव की वीरता उल्लेखनीय थी।मोरो पन्त की मृत्यु (संवत् 1884) के पश्चात् उनके पुत्र विश्वासराव सागर सूबे का कार्य देखने लगे। इसी समय होल्करों ने सागर पर अपना अधिकार कर लिया मोरोपन्त की मृत्यु (संवत् 1884) के पश्चात् उनके पुत्र विश्वासराव सागर सूबे का कार्य देखने लगे। इसी समय होल्करों ने सागर पर अपना अधिकार कर लिया। रधुनाथ राव ने नागपुर के भौसलों की सहायता से होल्करों को पराजित किया। रधुनाथ राव के समय में ही संवत् 1824ई. में

प्रथ्वीसिंह के वंशज मर्दनसिंह शाहगढ और गढ़कोटा के राजा बने। इन्होंने मराठों को दो बार हराया।

पेशवा के वंशज हिम्मत बहादुर और अली बहादुर के नाम उल्लेखनीय है। ''हिम्मत बहादुर की सहायता से ही अंग्रेजों ने बुन्दलखण्ड पर कब्जा किया। मराठों और अंग्रेजों की कई बार लडाई हुई। वि.सं. 1875 तक बुन्देलखण्ड का समस्त प्रदेश अंग्रेजों के शासन में आ गया।

अंग्रेजों ने वर्षो इस भू–भाग पर अपना अधिकार कायम रखा। संवत् 1905 में लार्ड डलहौजी ब्रिटिश राज्य के गर्वनर बने। इसी समय अंग्रेजों ने अपनी कूटनीतिक चालों व शक्ति से क्रमशः पंजाब, सतारा, को अपने राज्य मे मिला लिया। रानी लक्ष्मीबाई सागर के कमिश्नर की ओर से झॉसी का राज्य प्रबन्ध देखती थी।

बुन्देलखण्ड का 1857 का सैनिक विद्रोह भारत के स्वतंत्रय आन्दोलन में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। ''अंग्रेज सरकार के विरूद्ध सेना में खबर फैल गई कि वह गाय और सुअर की चर्वे लगे कारतूस चलवाती है, इसी से सेना में विद्रोह फैल गया। पहले बरहमपुर की सेना ने विद्रोह किया, फिर मेरठ की सेना ने इसके बाद दिल्ली मुर्शिदाबाद, लखनऊ, इलाहाबाद, काशी, कानपुर, झॉसी में विद्रोह हुआ।

बुन्देलखण्ड में भी इस सैनिक विद्रो ने बहुत जोर पकड़ा। ''सागर की 42 नं. पल्टन बागी हो गई। बानपुर के राजा मर्दनसिंह ने अपनी सेना लेकर खुरई तहसील और नरयावली के परगने पर अधिकार कर लिया। खुरई में अंग्रेजों की तरफ से अहमद बख्श तहसीलदार था। यह भी मर्दन सिंह से मिल गया। मर्दन सिंह ने ललितपुर चंदेरी पर कब्जा किया।

शाहगढ़ के राजा बख्तबली ने भी विद्रोह कर दिया। राहतगढ पर आभापानी गढ़ी (भोपाल) के नबाव ने अधिकार कर लिया। सर ह्यूरोज सागर के विद्रोह को दबाने के लिये ''मऊ'' से सना लेकर आया। मालथौन में मर्दन सिंह की सेना ने उसे रोक लिया। ह्यूरोज ने सागर की 39नं. की पल्टन की

सहायता से मर्दन सिंह को हरा दिया और बालवेट पुनः अंग्रेजों के अधिकार में आ गया। झॉसी आर कालपी में यद्यपि उन्हें कठिनाइयॉ आई।

रानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों का जमकर मुकावला किया, झॉसी से रानी कालपी पहुंची, वहॉ बख्तवली मर्दन सिंह की मदद से पुनः अंग्रेजों से टक्कर ले रहे थे। काल्पी से रानी ग्वालियर पहुंची, ग्वालियर के सिंधिया को हराकर रानी ने ग्वालियर पर अधिकार कर लिया। सर ह्यूरोज ने ग्वालियर पर भी आक्रमण कर दिया–''तात्या और रानी ने भीषण युद्ध किया इसी युद्ध में रानी की मृत्यु हो गई। तात्या को बंदी बनाया गया और बाद में फॉसी दी गई। राजविद्रोह शान्त हो जाने पर बुन्देलखण्ड के सारे प्रदेश अंग्रेजी राज्य में आ गये। वास्तव में 1859 का विद्रोह पिछली शताब्दी के राजनैतिक आर्थिक और धार्मिक कृत्यों की प्रक्रिया था। जिसमें ईस्ट इंडिया कंपनी के सारे कारनामें प्रतिच्छादित है।

सन् 1857 की क्रांति के पश्चात प्रथम विश्वयुद्ध के समय स्वतंत्रता संग्राम में बुन्देलखण्ड पुनः सक्रिय हुआ था। झॉसी के परमानन्द जी, कत्तार सिंह, विष्णु गणेश पिंगले दतिया के दीवान नाहरसिंह, खानिया धाना के श्रीमान्, खलक सिंह जू देव, सागर के वासुदेव राव सूबेदार, आदि व्यक्तियों ने अंग्रेजी शासकों को एक बार फिर कपित कर दिया।

वस्तुतः बुन्देलखण्ड ने भारत के राजनैतिक इतिहास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निर्वाह किया है। स्वतंत्रता की जिस भावना का सूत्रपात वीरसिंह देव ने किया था, मधुकर शाह और चम्पतराय ने उसे आगे बढाया, छत्रसाल ने उसमें शक्ति फूॅकी और स्फूर्ति बनाकर मर्दन सिंह, बख्तबली के द्वारा वह अनेक शहीदों को प्राप्त हुई। रानी लक्ष्मीबाई, तात्याटोपे आदि के उत्सर्ग उसे अमर बना गये। कालान्तर में वहीं बीसवीं शती के प्रारम्भिक दशकों में जन आन्दोलन का आधार बन गई।

(स) बुन्देलखण्ड का नामकरण :–

''बुन्देलखण्ड'' भू–भाग प्रागैतिहासिक काल में भी अपने अस्तित्व में था और आज भी है। यह वह भू–भाग है जो प्रमुख रूप से बुन्देले राजपूतों की निवासभूमि अथवा उनके द्वारा शासित भूमि रहा है। ऐतिहासिक विवरण से ज्ञात होता है कि 'बुन्देल' अथवा बुन्देलाशब्द सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी, अग्निवंशी, चेदि, चौहान, गहरवार आदि वर्ग विशेष के क्षत्रियों का द्योतक नहीं है। बुन्देलखण्ड में बसने के कारण वहॅा का क्षत्रिय वर्ग विशेष 'बुन्देला' नहीं कहलाया, इसके विपरीत बुन्देलों की निवासभूमि होने के कारण यह भू–भाग 'बुन्देलखण्ड' कहलाया।

बुन्देलखण्ड नामकरण के संबंध में अनेक मान्यताएॅ है। प्रथम मान्यता के अनुसार गिरिराज विन्ध्य की उपव्यका में स्थित होने के कारण यह भू–भाग बुन्देलखण्ड कहलाता है। इस भू–भाग का नाम 'बुन्देलखण्ड' मानने वाले 'विन्ध्य' शब्द का निर्माण मानकर कालांतर में 'बुन्देखण्ड' का नाम मानते है।

द्वितीय मान्यता के अनुसार बुन्देले इस भूभाग के भूल निवासी नहीं है। यहॅा आकर बसने के पश्चात् ही बुन्देले कहलाये। जनश्रति है कि गहरवार क्षत्रिय महाराज हेमकरन, काशी का राज्य छिन जाने पर इस भूभाग में आये तथा पुनःश्च राज्य राज्य प्राप्ति हेतु उन्होंने विन्ध्यवासिनी देवी की आराधना की। देवी को अपना सिर समर्पित करने के लिए जैसे ही अपनी तलवार उठाॅी देवी ने उनका हाथ पकड लिया, किन्तु उनके मस्तक पर तलवार की खरौंच लग ही गई और रक्त की कुछ बूॅदे भूमि देवी के सामने गिर पड़ी। अपने रक्त की बूॅद देवी को समर्पित करने वाले हेमकरन महाराज की संतान बुन्देले कहलाये तथा इनकी निवास भूमि 'बुन्देलखण्ड' नाम से संबोधित होने लगी।

सम्भवतः विन्ध्य से विन्हयेन शब्द की निष्पत्ति हुई। कालान्तर में विन्ध्येले से बुन्देले शब्द बना और इन बुन्देलों का इस भू–भाग में शासन स्थापित होने के पश्चात ही उसे बुन्देलखण्ड कहा जाने लगा। 11वीं शती पूर्ण के महाराज हेमकरण की 10वीं पीढ़ी में 16वीं शती के लगभग मध्यकाल में महाराज रूद्रप्रताप हुये, जिन्होने सर्वप्रथम चन्देलों के अधिकार से इस

भूखण्ड का कुछ भाग छीनकर अपना राज्य स्थापित किया। इतिहासकारों ने इनके शासन का आरम्भ सन् 1553ई0 (सं. 1610वि.) माना है। महाराज रूद्रप्रताप ही बुन्देल राज्य के प्रथम शासक थे।

इनके पश्चात् उनके पुत्र महाराज भारतीचन्द्र ने अपने राज्य का विस्तार उत्तर में यमुना नदी के तट तक तथा दक्षिण पूर्व में कालिंजर और महोबा तक किया। इसी काल से इस भूभाग को बुन्देलखण्ड कहा जाने लगा प्रतीत होता है। महाराज छत्रसाल बुन्देला इसी राजवंश के उत्तराधिकारी हुए। इससे शत प्रतीत होता है कि बुन्देलखण्ड का नाम चार सौ वर्षो से अधिक प्राचीन नहीं है।

इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में बुन्देलखण्ड का 'जेजाक भुक्ति' के रूप में उल्लेख किया गया है। इतिहासकारों ने राजा जेज्जाक (जयशक्ति) को प्रातापशाली शासक कहकर उसका राज्य यमुना से नर्मदा तक विस्तृत बतलाया है। इसी राजा के नाम पर यह यमुना से नर्मदा तक का भाग 'जीजक' अथवा जेजक भूमि' कहलाता था। स्व0 श्रीकृष्ण बल्देव वर्मा का तर्क है कि ''बैदिक कालीन यजुर्वेदीय कर्मकाण्ड का जहॉ सर्वप्रथम अभ्युदय होने के कारण यह प्रदेश 'यजुर्होति' कहा गया था, जिसका अपभ्रष्ट रूप 'जैज–भुक्ति' है।' प्रथ्वीराज चौहान के मदनपुर के शिलालेख से प्रकट होता है कि 12वीं शताब्दी तक यह देश 'जेजाकमुक्ति' ही कहलाता था।

'बुन्देलखण्ड' का नाम 'दशार्ण देश' भी बतलाया जाता है। यह नाम 'जेजाकमुक्ति' से पूर्व का होना चाहिए। महाभाष्य के टीकाकार ने नदी विशेष तथा देश विशेष का 'दशार्ण' लिखा है। बुन्देलखण्ड दस नदियों का देश है। चम्बल,पहूज,कालीसिंधु,और कुॅवारी नदियों का संगम यमुना में होता है। इस सीान को पंच–नद भी कहते है। शेष पॉच नदियॉ बेलवती (बेतवा), कन्दाकिनी, केन, तमसा और धसान ह।

इस प्रदेश को बुन्देलखण्ड कहे जाने का कारण यहॉ की भौगोलिक स्थिति ही प्रतीत होती है। इस प्रदेश में विन्ध्य पर्वत की श्रेणियॉ है और इस

कारण यह विन्ध्येलखण्ड अथवा विन्ध्येलखण्ड कहलाया। कालांतर में विन्ध्येलखण्ड का बुन्देलखण्ड नाम प्रसिद्ध हुआ।

भारत वर्ष के इतिहास में बुन्देलों का अपना स्थान है। बुन्देलों में कितने ही प्रतापी राजा हुये जिन्होंने मुगल शासकों से डटकर लोहा लिया और अपना कीर्तिमान स्थापित किया। बुन्देलों के शासन होने के कारण ही सारे प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड पड़ गया।

वैदिक साहित्य में इस प्रदेश का नाम यजुर्होति उपलब्ध है। यही इस प्रदेश का प्राचीनतम नाम माना जाता है। कहा जाता है कि यजुर्वेदीय कर्मकाण्ड का आविर्भाव सबसे पहले इसी प्रदेश में हुआ और इसी कारण से इसका नाम ययुर्होति पड़ा और फिर अपभ्रंश होते होते अयुर्दोति शब्द बिगडकर जीजशुक्ति और जेजाकमुक्ति बन गया। कुछ साहित्यकारो का मानना है कि, बुन्देला शासक जयशक्ति के नाम से इस प्रदेश का नाम जेजाकभुक्ति पड़ा। इसी जेजाकमुक्ति शब्द का अपभ्रंश रूप जुझौति या जुझाखंड हो गया। महाभारत काल में उस प्रदेश को दशार्ण कहा जाता था। दशार्ण इस प्रदश में बहने वाली नदी का नाम भी है जिसे आज धसान कहते है। 'दशार्ण' का शाब्दिक अर्थ है दस जल 1 अण शब्द का अर्थ है जल। कुछ विद्वान इस प्रदेश में बहने वाली दस प्रमुख नदियों के कारण इस प्रदेश का नाम दशार्ण मानते है।

इस प्रदेश के नाम चेदि' राजा चिदि के नाम से पड़ा। राजा चिदि राजा विदर्भ के पोते थे। ये यदुवंशी थे। महाभारत काल में चेदि प्रदेश का राजा शिशुपाल था। कुछ साहित्यकारों का अनुमान है कि इस चेदि शब्द से ही चन्देल शब्द की उत्पत्ति हुई। चेदि लोग ही चन्देल कहे जाने लगे। कतिपय मान्यताओं के अनुसार चंद्रब्रह्म के वंशज चंदेले कहलाये। परन्तु इस प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड कभी नहीं पड़ा। इस प्रदेश पर, चेदि, मौर्य, शुंग, वाकाटक, गुप्त, कल्चुरि, चन्देल, अफगान, मुगल, गौड़, इत्यादि विभिन्न राजाओं ने राज्य किया। अंत में बुन्देले आये और उन्होंने खंगार राज्य छीन

कर अपना आधिपत्य जमाया। बुन्देलों के नाम पर इस प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड पड़ा, जो आज भी प्रचलित है।

इतिहास वेत्ताओं ने बुन्देलखण्ड को भारतवर्ष का ह्रदय कहा है तो भूगोल शास्त्रियों ने विन्ध्यांचल को हिमालय से भी पुरातन बताया है। विन्ध्यांचल की तलहटी में एक विशाल बीहड़ वन है जा विन्ध्य श्रेणियों से घिरा है, जहां उच्च तुग श्रृंगों से सहस्त्रों झरने और प्रपात प्रवाहित होते रहते है। इस स्थान को विन्ध्य क्षेत्र कहते है। पौराणिक कथाओं में विन्ध्यक्षेत्र को अगस्त, अंगिरा, विश्वामित्र आदि ऋषियों की तपोभूमि बताया गया है। बुन्देलखण्ड को जिस प्रकार तपोभूमि की मान्यता प्राप्त है उसी प्रकार वीर भूमि, कवि भूमि और प्राकृतिक छटा से सज्जित सौजन्य भूमि की सहज ख्याति मिली है। इस छंद में बुन्देलखण्ड के सर्वतोमुखी वैभव का दर्शन कराना चाहिये। ''विन्ध्यांचल अंचल क्षमा की क्षमता को लिये, विश्व को लिखा रहा है मानवी परंपरा मान्य मान्यता का विभुता का वर वीरता का, पड़ा रहा पाठ, छत्रसाल रण बांकुरा। सुर–बन, लब्जित हो करता सराहना है, कानन यहॉ का देख रेख के हरा–भरा। बेतवा, धसान, सिन्ध, केन करती कलोल, बन्दौ 'मित्र' बिमल बुन्देल की वसुंधरा।

बुन्देलखण्ड का प्राचीनतम नाम चेदि था। बाद में उसकी एक संज्ञा जेजाक भुक्ति हुई। महाजनपद–युग में चेदि की गणना भारत के सोलह बडे राज्यों में की जाती थी। पौराणिक बौद्ध एवं जैन साहित्य से यह ज्ञात होता है कि चेदि जनपद की राजधानी का नाम ''शुक्तिभतीपुर'' था। यह नगर शुक्तिमनी नदी के तट पर स्थित था। अब यह नदी केन कहलाती ह। आगे चलकर चेदि का परवर्ती नाम बुन्देलखण्ड प्रसिद्ध हुआ।

बुन्देलखण्ड एक भौगोलिक अभिधान है जिससे बुन्देल नामक क्षेत्र का द्योतन होता है। भारत के इस प्राचीन भू–भाग ने यह नाम उस समय पाया जब चौदहवीं सतहवों शताब्दी ई. में बुन्देल राजपूतों ने अपनी चरम शौर्य शक्ति के कारण अपनी पृथक पहचान बनायी और उनके द्वारा शासित क्षेत्र

बुन्देलखण्ड कहलाया। इसके पूर्व यह क्षेत्र चेदि–जेजाकशुक्ति, जुझौति, विन्ध्येलखण्ड एवं विन्ध्यप्रदेश आदि विविध नामों से विभिन्न कालों में अपनो प्रभुसत्ता संजोए रहा।

(द) भाषायी पृष्ठभूमि :–

मध्यभारत के विन्ध्यांटबी क्षेत्र विन्छोल खण्ड अथवा बुन्देलखण्ड प्राचीनतम क्षेत्रों में है। जिसमें झॉसी, ललितपुर, जालौन, हमीरपुर, महोबा, बांदा, चित्रकूटधाम (साहू जी महाराज नगर,), टीकमगढ, छतरपुर, पन्ना का एक भाग, सागर, दमोह, छतरपुर, दतिया, भिण्ड, ग्वालियर, मुरैना, शिवपुरी, विदिशा और जबलपुर के अतिरिक्त गुना, सिवनी, तथा छिंदवाड़ा, बालाघाट, और बैतूल का विशाल भूभाग आता है जिसमें लगभग 2 करोड़ लोग निवास करते है। और इन्हें क्षेत्र के नामानुरूप विन्हयेलखण्डी या बुन्देलखण्डी कहते है। बुन्देलखण्डी का रूपान्तरण बाद में बुन्देला हुआ जिनकी भाषा बुन्देली मानी गई।

बुन्देली भाषा भी इस भूखण्ड के प्राचीन स्वरूप के पुरातन भाषाओं में एक है। बुन्देली का उद्भव प्राकृत और प्राकृत अपभ्रंश से हुआ। ''संस्कृतात् प्राकृत श्रेष्ठ और ज्येष्ठा'' इसे प्राचीन भाषा की मान्यता प्रदान करते है। बुन्देली भाषा की यह धारणा 10वीं सदी में मिलने लगी थी किन्तु इसके आगे ऊबड़–खाबड़ क्षेत्रों में बहती जमुना, नर्मदा, चम्बल और टौंस के प्रवाह की भांति इसका विकास प्रारंभ में धीमा किन्तु बाद में तीब्र होता चला गया। जगनिक को बुन्देली का आदि कवि और उसके द्वारा रचित 'रासो' बुन्देली भाषा का प्रथम ग्रंथ बना।

बुन्देली के भाषा के सम्बंध और विकास के कार्य, बुन्देलीवार्ता गुरसराय बुन्देली हिन्दी शोध संस्थान झॉसी , चन्दनदास शोध संस्थान बांदा, बुन्देली विकास परिषद स्यावरी, बुन्देली भारती पृथ्वीपुर (म.प्र.) बुन्देलखण्ड अकादमी छतरप्र और सागर विश्वविद्यालय सागर (म.प्र.), की ईसुरी पीठ, बुन्देली शोध संस्थान सेंवड़ा (म.प्र.) आदि ने किया। भोपाल के अखिल

भारतीय बुन्देलखण्ड साहित्य एवं संस्कृति परिषद आदि संस्थानों का बुन्देली भाषा के विकास में बहुत योगदान है।

''पांचकोस पै बदले पानी। बीस कोस में बानी।''

की उक्ति के बावजूद साहित्य साधकों ने अथक परिश्रम कर बुन्देली की समृद्धि में अपना 'होम' दान किया। इतने विस्तृत क्षेत्र और बदलती परिस्थितियों में जहां बुन्देली के विभिन्न रूप जैसे शिष्ट हवेली, खटोला, बनफरी, लुधयांती, चौरासी, ग्वालियरी, भदवरी, तंवरी, सिकखारी, पबांरी, जबलपुरी और डॅगाई की पहिचान रहते हुए परिनिष्ट बुन्देली में अगाध साहित्य की रचना की इसे भाषा का स्थान दिलाया।

इसके पूर्व संतकवि तुलसीदास की कवितावली में बुन्देली भाषा का दृगदर्शन होता है। इसमें बुन्देली शब्दों, बारे, बुढे, कथरी, रूख आदि और क्रियायें तथा उबारना और छोरना मुहावरों का समावेश हुआ है इस प्रकार 9वीं सदी के शैशव से लेकर बुन्देली राजमहलों से निकल कर जनपथ पर आ खडी हुई।

भारत की अधिकांश आर्य भाषाओं तथा उनकी बोलियों के नाम उनके क्षेत्र पर आधारित है यथा पंजाब की पंजाबी, राजस्थान की राजस्थानी, गुजरात की गुजराती, बंगाल की बंगाली, आसाम की आसामी, उड़ीसा की उड़िया, बिहार की बिहारी। इसी प्रकार अवध की अवधी, ब्रज की ब्रज, कन्नौज की कन्नौजी, बधेलखण्ड की बधेली, मालवा की मालवी निमाड़ की निमाड़ी इसी आधार पर बुन्देलखण्ड की लोकभाषा बुन्देलखण्डी अथवा बुनदेली कहलाती है।

डॉ. उदयनारायण तिवारी के अनुसार :– ''बुन्देली अथवा बुन्देलखण्डी वस्तुतः बुन्देलखण्ड की भाषा है। बुन्देल राजपूतों की प्रधानता के कारण ही इस प्रदेश का नाम बुन्देलखण्ड तथा इस भाषा का नाम बुन्देली पड़ा।''

डॉ. भोलानाथ तिवारी :– के अभिमत से ''बुन्देले राजपूतों के कारण मध्यप्रदेश तथा उत्तर प्रदेश की सीमा के झॉसी, छतरपुर, सागर आदि तथा आसपास के भागों को बुन्देलखण्ड कहते है। वहीं की बोली बुन्देली या बुन्देलखण्डी है।''

''बुन्देली'' पश्चिमी हिन्दी की एक महत्वपूर्ण बोली है। बुन्देली लोकभाषा बुन्देलखण्ड में बोली जाती है किन्तु यह संपूर्ण बुन्देलखण्ड में प्रचलित नहीं है। डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार एक तो यह बॉदा जिले की बोली नहीं है। दूसरे चम्बल नहीं ग्वालियर राज्य की उत्तरी और पश्चिमी सीमा का निर्माण करती है। किन्तु बुन्देली उत्तर में चम्बल तक ही सीमित नहीं है। यह इस नदी की पार कर आगरा मैनपुरी और इटावा जिले की दक्षिणी भाग में भी बोली जाती है। पश्चिम में यह चम्बल तक भी बोली जाती है।ग्वालियर राज्य के पशचिमी भाग में ब्रज और राजस्थान की कुछ बोलियों से मिश्रित बोली जाती है। इसी प्रकार दक्षिण में यह नर्मदा को पार कर होशंगाबाद और नरसिंहपुर जिले में ही नहीं वरन् सिवनी जिले में भी बोली जाती है। यह बालाघाट के लोधियों द्वारा भी बोली जाती ह। इस प्रकार यह 19 हजार वर्ग मीट में बसे लोगों द्वारा बोली जाने वाली लोकभाषा है।''

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार :– ''बुन्देली शुद्ध रूप में झॉसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, भोपाल, ओरछा, (टीकमगढ़), सागर, नरसिंहपुर, सिवनी तथा होशंगाबाद में बोली जाती है। इसके मिश्रित रूप दतिया, पन्ना, चरखारी, दमोह, बालाघाट तथा नागपुर में प्रचलित है''। डॉ. हरदेव बाहरी ने बुन्देली का क्षेत्र इस प्रकार वर्णित किया है

''यमुना उत्तर और नर्मदा दक्षिण अंचल।
पूर्व ओर है टोंस, पश्चिमी चल में चम्बल।।

किन्तु वर्तमान समय में यह क्षेत्र इससे कुछ अधिक बढ़ा, इसके अंर्तगत उत्तर प्रदेश में बॉदा का पश्चिमी भाग, उरई, हमीरपुर, जालौन और झॉसी के पूरे पूरे जिले एवं मध्यप्रदेश में ग्वालियर का पूर्वी भाग, भोपाल का

थोडा सा हिस्सा ओरछा, पन्ना, दतिया, सागर, टीकमगढ, नरसिंहपुर, सिवनी, छिंदवाडा, होशंगाबाद और बालाघाट के जिले आते है।''

डॉ. धीरेन्द्र वर्मा – शुद्ध बुन्देली क्षेत्र के अन्तर्गत झॉसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, भोपाल, ओरछा, सागर, नरसिंहपुर, सिवनी तथा होशंगाबाद और मिश्रित बुन्देली का क्षेत्र दतिया, पन्ना, चरखारी, दमोह, बालाघाट, तथा छिन्दवाडा का कुछ भाग मानते है।

डॉ. एम.पी. जायसबाल – ने शुद्ध बुन्देली के क्षेत्र बुन्देली भाषी जिले टीकमगढ, सागर, झॉसी, जालौन जिले का अधिकांश भाग, हमीरपुर, ग्वालियर जिले के चन्देरी एवं मुंगावली क्षेत्र, भोपाल, सागर, भेलसा(विदिशा) जिले का आधा पश्चिमी भाग एवं दतिया की सीमा के भाग बतलाये है। उनके शेष बुन्देली भाषी जिले छतरपुर, पन्ना, दमोह, नरसिंहपुर, होशंगाबाद, सिवनी, बालाघाट, छिंदवाडा, तथा दुर्ग के कुछ भाग है। इन्होंने बांदा जिले को भी बुन्देली भाषी क्षेत्र के अन्तर्गत स्थान दिया है।

डॉ. रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल – ने बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत आने वाले जिलों – जालौन, हमीरपुर, झॉसी, बॉदा, टीकमगढ, छतरपुर, पन्ना, दमोह, सागर, नरसिंहपुर, भिण्ड, दतिया, ग्वालियर, शिवपुरी, मुरैना, गुना, विदिशा, रायसेन, और होशंगाबाद को सम्मिलित करने के पश्चात उल्लेखित किया कि ''भाषायी व्यापकता की दृष्टि से उक्त सीमा में कुछ परिवर्तन आवश्यक होंगे, जैसे नर्मदा के दक्षिण में स्थित छिंदवाड़ा, सिवनी तथा बैतूल जिले मराठी मिश्रित होते हुये भी बुन्देली भाषा भाषी ही है।

झॉसी, जालौन, हमीरपुर, और बॉदा को बुन्देलखण्ड के अन्तर्गत माना गया है। उनमें से बॉदा जिला बुन्देली भाषी नहीं है। वहॉ अवधी का एक रूप बोला जाता है। चम्बल नदी ग्वालियर की उत्तरी और पश्चिमी सीमा पर बहती है जिसके साथ बुन्देलखण्ड की सीमा समाप्त हो जाती है किन्तु बुन्देली इस सीमा को बांधकर, आगरा, मैनपुरी और इटावा जिले के दक्षिणी भागों में बोली जाती है।

बुन्देली निम्नलिखित जिलों के लगभग एक करोड़ लोगों की मातृभाषा है।

उत्तर प्रदेश के पांच जिले – झॉसी, ललितपुर, हमीरपुर, जालौन तथा बॉदा।

मध्यप्रदेश के बाइस जिले – टीकमगढ, छतरपुर, पन्ना, सागर, दमोह, दतिया, ग्वालियर, भिण्ड, मुरैना, गुना, शिवपुरी, विदिशा, रायसेन, होशंगाबाद, जबलपुर, नरसिंहपुर, मण्डला, शिवनी, छिंदवाडा, बालाघाट तथा बैतूल, सतना की नागौद तहसील तथा सीहोर का पूर्वी भाग इनमें से सीमान्त जिलों का भाषा पर उनसे लगने वाले क्षेत्रों की भाषा का प्रभाव है। किन्तु भषा वर्षो के निर्णायक तत्वों ध्वनि, अर्थ, वाक्य रचना, शब्द समूह तथा रूप के आधार पर उपर्युक्त सभी जिलों की भाषा बुन्देली ही है।

राजनैतिक एक सूत्रता के अभाव के कारण बुन्देली के बहुत से क्षेत्रों के लोग स्वयं यह स्वीकार नहीं करते कि उनकी मात्रभाषा का स्थानीय नाम भी दे रखे है। उदाहरणार्थ–भिण्ड, मुरैना के लोगों ने तवरधारी तथा भदवरी, बॉदा और हमीरपुर जिलों के कुछ अंचलोंके लोगों ने बनाफरी, ग्वालियर, शिवपुरी और गुना की भाषा चौरासी कहलाने लगी। ग्रियर्सन महोदय ने भी बुन्देली क्षेत्र में बसने वाली जातियों अथवा स्थानों के नाम पर बुन्देली की निम्नलिखित उपबोलियों या क्षेत्रीय रूपों की चर्चा की है जैसे– लुधांती, पॅवारी, खटोला, बनाफरी, कुन्द्री, निभट्टा, भदौरी तथा बुन्देली क्षेत्र के दक्षिण की मिश्रित बोलियां लोधी, कोष्ठी, कुम्भारी आदि किन्तु बुन्दली नाम भी उन्हीं को दिया हुआ है।

(4) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक/परम्परा से स्पष्ट रूप से संबंधित ग्राम, समुदाय, समूह, परिवार एवं व्यक्ति का नाम एवं सम्पर्क संलग्न है।

1. ग्राम पथरिया जाट
2. ग्राम बांकोरी
3. ग्राम पलोह
4. ग्राम भुसौरा,

5. ग्राम पिपरिया
6. झांसी
7. ललितपुर
8. छतरपुर

(5) योजना के सांस्कृतिक/परम्परा के तथ्यों की जीवंतता का विस्तारित भौगोलिक क्षेत्र (ग्राम, प्रदेश, राज्य, देश, महादेश आदि) जिसमें उसका अस्तित्व है, पहचान है।

योजना से संबंधित प्रतिनिधि ग्राम, समुदाय, समूह, परिवार एवं व्यक्ति

ग्राम पथरिया जाट : यह ग्राम बुन्देलखण्ड के सागर जिले के पूर्व में स्थित है। ग्राम में अधिकांश यादव समुदाय निवासरत् हैं। यादव परिवारों में ''मामुलिया'' नामक अनुष्ठानिक खेल का आयेाजन होता है। समाज की क्वांरी बालिकायें इसमें भागीदारी करती हैं। चूंकि ग्राम कस्बा के जैसा है अतः इसमें कई घरों में आयोजित किया जाता है। बालिकायें मामुलिया बनाकर उसका विधिवत् पूजन तथा अंत में गायन और विसर्जन करती हैं। उन्हें यह कलारूप विरासत में मिला है अर्थात् वाचिक परम्परा के माध्यम से यह रूप हस्तांतरित होता चला आ रहा है।

ग्राम बांकोरी : यह ग्राम सागर मुख्यालय से लगभग 75 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। यहां विभिन्न जातियों के लोग निवासरत् हैं। ग्राम में मामुलिया का आयोजन होता है जिसमें सभी समुदाय की बालिकायें भाग लेती हैं।

ग्राम पलोह : ग्राम पलोह देवरी विकासखण्ड में स्थित है। यह लोधी समाज बाहुल्य ग्राम है। इस समाज में मामुलिया का बहुत प्रचलन है। समाज की बालिकाएं इसमें बढ़–चढ़कर भाग लेती हैं तथा गायन के साथ नर्तन भी करती हैं।

ग्राम भुसौरा : यह ग्राम केसली विकासखण्ड में स्थित है। कुर्मी समजा बाहुल्य ग्राम है। यहां पर ज्यादातर कृषि कार्य के अलावा दूध का व्यवसाय होता है।

समाज की बालिकायें मामुलिया का खेल प्रतिवर्ष खेलती हैं। इस अवधि में ग्राम में बड़ी चहल–पहल रहती है। ग्राम में मामुलिया विसर्जन हेतु बेबस नदी है वह ग्राम से लगभग 1 कि.मी. की दूरी पर है इसलिए बालिकायें मामुलिया को विसर्जित करने गीत गाते हुए जाती हैं और वातावरण गीतमय हो जाता है।

ग्राम पिपरिया : ग्राम पिपरिया, सागर विकासखण्ड में स्थित है। यहां कुशवाहा समाज का बाहुल्य है। कुशवाहा समाज की बालिकायें पहले चंदा तरैयां, फिर टेसू तथा उसके उपरांत मामुलिया खेलती हैं। पर्वों के इस क्रम के अंत में झिंझिया का क्रम है। मामुलिया में विसर्जन के समय यहां की बालिकाएं गीतों के साथ नृत्य भी करती हैं।

इन ग्रामों के अलावा टीकमगढ़, पन्ना, बिजावर, झांसी, ललितपुर जनपदों में शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों में मामुलिया का आयोजन किया जाता है।

(6) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक/परम्परा की पहचान एवं उसकी परिभाषा, उसका विवरण –

1) मौखिक परम्परा एवं अभिव्यक्तियां

2) प्रदर्शनकारी कलाएं

3) सामाजिक रीति–रिवाज, प्रथाएं, चलन, परम्परा संस्कार एवं उत्सव आदि

4) प्राकृति एवं जीव जगत के बारे में ज्ञान एवं परिपाटी व अनुशीलन प्रथाएं

5) पारम्परिक शिल्प कारिता

6) अन्यान्य

मौखिक परम्परा :– मामुलिया परम्परा एक विशेष शैली का कलारूप है। यदि इसकी परम्परा के कलारूपों की बात करें तो मामुलिया के अलावा अन्य कलारूप भी हैं जो जनमानस में प्रचलित और सराहनीय हैं। मौखिक परम्परा

में गीतों के पोछे चल रहे कथानकों का विशेष महत्व है। हर गीत में एक कथा के साथ ही संस्कृति एवं सामाजिक परम्परा होती है। लोक का इतिहास भी इसमें छिपा होता है। लेकिन वर्तमान में ये कलारूप विलुप्त हो रहे हैं। मामुलिया के साथ अन्य कलारूप में चंदा, तरैयां, टेसू, झिझिया, सुआटा, मकरंदो आदि रूप हैं। अनुष्ठानिक गीतों में बीरोठ, जस गायन, विविध भजन, भक्तें, बम्बुलियां आदि आते हैं।

प्रदर्शनकारी कलाएं :– प्रदर्शनकारी कलारूपों में समस्त गायन, संस्कारी गीत, गाथाएं, कहानी, कहावतें, लोकोक्तियां, मुहावरे, समस्त लोकनृत्य, लोकशिल्प, माड़ने चौक, सुरैती आदि आते हैं। इनके अलावा नौटंकी, नाटक, रामलीला, स्वांग प्रमुख हैं।

संस्कारी गीत : जन्म से मृत्यु पर्यन्त संस्कारों पर गाये जाने वाले प्रमुख गीत।

त्यौहार एवं उत्सव पर्व गीत : चैत्र से फाल्गुन तक प्रमुख उत्सवों पर गाये जाने वाले गीत।

धार्मिक गीत : भजन, भक्तें, बम्बूरिया, कार्तिक गीत, जस।

नृत्यात्मक गीत : बुन्देलखण्ड के प्रमुख लोकनृत्यों के साथ गाये जाने वाले गीत।

जातिगत गीत :ढिमरयाई, कांडरा, कछयाई, अहिराई।

भिक्षावृत्ति गीत : वसदेवा, नोंना चमारी आदि।

यात्रा गीत : बम्बुलियां, लम्टेरा आदि।

लोकगाथाएं : धर्मासाबरी, रैया, बैरायठा, ढ़ोलामारू, आल्हा, धांदू भगत, जगदेव, श्रवण कुमार, राजाकरन, मौरध्वज आदि।

लोकनृत्य : बधाई, नौरता,

सैरा, राई,

बरेदी, मौनियां।

(7) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा का रूचिपूर्ण सारगर्भित संक्षिप्त परिचय दें –

ekeqfy;k

भारत भूमि त्यौहारों की पुण्यभूमि है। बुन्देलखण्ड में जितने त्यौहार और लोकोत्सव होते हैं, उतने किसी भू–भाग में नहीं होते। आज के भौतिकवादी युग में जहां मानव की व्यस्तता क्षण–प्रतिक्षण बढ़ती जा रही है, समयाभाव से उत्साह और उमंग और उल्लास का ह्रास हो रहा है। मुस्कराहट, हंसा और ठहाके कोसों दूर होते जा रहे हैं, वहां जन–जीवन को सरस, सामान्य और स्वस्थ बनाने में ये लोकपर्व अपनी अहं भूमिका निभाते हैं।

हमारे क्षेत्र की प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के रक्षक लोक–पर्व हमारी अमूल्य धरोहर हैं। बुन्देलखण्ड में बालिकाओं का ऐसा ही लोकोत्सव है ''मामुलिया''। मामुलिया के खेल में प्रयुक्त पुण्य जीवन के सुख और नारी सौन्दर्य का प्रतिनिधित्व करते हैं। फूल–फल युक्त बेलें सम्पन्नता और समृद्धि की प्रतीक हैं। कल्पवृक्ष इच्छा की पूर्ति करने वाले मन का द्योतक है और वटवृक्ष चिरंतन रहने वाले प्राण का। तुलसी पवित्रता की प्रतीक है। ये सब तांत्रिक प्रतीक न होकर लोक प्रतीक हैं।

बालिकाओं के विभिन्न अवसरों एवं ऋतुओं के गीतों में मामुलिया के गीत भी आते हैं। बुन्देलखण्ड में कुमारी बालिकाएं भादों मास में कहीं–कहीं क्वार के कृष्ण पक्ष में मामुलिया के गीतमय खेल खेलतीं हैं। इसके लिए कोई निश्चित तिथि या वार नहीं होता। यह संध्या के समय खेला जाता है। आंगन में बीच गौबर से चौकोर लीपकर और चौक पूरकर बबूल की कांटोवाली हरी झाड़ी लगा दी जाती है यही मामुलिया है। हल्दी और अक्षत से पूजा करके कांटों में फूल खोंस दिये जाते हैं। चने, ज्वार के फूले, फ्रूट, कचरिया आदि का प्रसाद चढ़ाकर बालिकाएं उसकी परिक्रमा लगाती हैं। उसे उखाड़ कर

किसी तालाब या नदी में सिरा देती हैं। वे मामुलिया को पुष्पादि से सजातीं हैं। सजाते समय गाती हैं –

ल्याओ–ल्याओ चंपा चमेली के फूल,
सजाओ मोरी मामुलिया।

मामुलिया के आये लिबौआ,
झमक चली मेरी मामुलिया।

पूजन में मामुलिया के स्तुति गान हैं –

चीकनी मामुलिया के चीकने पतौआ,
बरा तरें लागी अथैया।

कै बारी भौजी बरा तलें लागी अथैया,
मीठी कचरिया के मीठे जो बीजा,
मीठे ससुरजू के बोल।

काई कचरिया के काए जो बीजा,
काए सासजू के बोल,
कै बारी बैया, करए सासजू के बोल।

ससुर जी के बोल भले ही मीठे लगते हों, परन्तु सासजू की वाणी उतनी ही कड़ती है, जितनी कड़ती कचरिया के बीज।

जान पड़ता है कि बबूल का वृक्ष बहुतायत से पाये जाने का कारण उसकी उपयोगिता देख देव के रूप में उसकी पूजा की जाती है। यह प्राचीन अनुष्ठान का अवशिष्ट रूप जान पड़ता है।

मामुलिया के आए लिबौआ, झमक चली मोरी मामुलिया,
जितै बाबुल जू के बाग, उतै मोरी मामुलिया,

आजी देखन आई बाग, सजाय ल्याव मामुलिया,
लाओ चंपा चमेली के फूल, सजाओ मोरी मामुलिया,

लयाओ घिया तुरैया के फूल, सजाओ मोरी मामुलिया,
जिहै–जिहै वीरन जू के बाग, उतै मोरी मामुलिया,

भावी देखन आई बाग, सजाय ल्याव मामुलिया,
ल्याओ चंदा चमेली के फूल, सजाओ मोरी मामुलिया,

जितै–जितै बाबुल जे के बाग, उते मोरी मामुलिया,
मैया देखन आई बाग, सजाय ल्याव मामुलिया,

ल्याओ चंदा चमेली के फूल, सजाओ मोरी मामुलिया।

——

चनदा के आसपास गौअन की रास,
बिटियां पूजें सब–सब रात,

चन्दा राम राम ले ओ,
सूरज राम ले ओ, हम घरै चले।

चंदा के आसपास मुतियन की रास,
बिटियां पूजें सब सब रात।

चंदा राम राम ले औ
सुरज राम राम ले औ, हम घरै चले।

&&00&&

मामुलिया सी जिन्दगी, कहुं कांटे कहुं फूल
ले ओ संवार आवसीर में, होत सबई में भूल।

लइयो लइयो चमेली के फूल,
सजइयो मोरी मामनुलिया,

सज वरन–वरन सिंगार,
सिरहयो मोरी मामुलिया।

कौना लगाये बमूला के बिरछा,
और जरिया की डार,

सिरइयो मोरी मामुलिया .....

वन तुलसी गुलबंगा बेला,

निके रची कचनार।

सिरइयो मोरी मामुलिया।
बालापन के सपने सहाने,

और अंसुअन की धार,
सिरहयो मोरी मामुलिया।

निरई जग जो पीर न जाने,
और निठुर करतार,

सिरइयो मोरी मामुलिया ....

माई बाबुल की देहरी छूटी,
छूटो वीरन नेह अपार,

सिरहयो मोरी मामुलिया,
छूट गई संग की गुइयां,

छूटी रार तकरार,
सिरहयो मोरी मामुलिया .....

मामुलिया आश्विन मास की पूर्णिमा, अमावस्या तक पितृपक्ष में बुन्देलखण्ड के गांव व शहर में कुंवारी कन्याओं का विशेष खेल होता है, जिसे मामुलिया के नाम से जाना जाता है। इस लोकोत्सव में बालिकायें बेरी की डाल को फूलों से सजाकर लाल पटका पहना कर स्त्री रूप में मानकर पास–पड़ौस सबके घरों में ले जाती हैं तथा गाती हैं –

मामुलिया के आये लिवउआ,
झमक चली मेरी मामुलिया।

ल्याओ–ल्याओ चम्पा चमेली के फूल,
सजाओ मेरी मामुलिया।

सभी मामुलिया के दर्शन कर स्नेह पूर्वक मामुलिया के पूजन तथा विदा के लिए धन देते हैं। बालिकाएं चौक पूरकर मामुलिया को उस पर रख

पूजा करतीं हैं। अंत में मामुलिया के गले मिलकर विदा लेती हैं तथा उदास होकर उसे पास के नदी या तालब में विसर्जित कर देती हैं।

मामुलिया में स्त्री जीवन का दर्शन निहित है जिस प्रकार बेरी का पेड़ प्रत्येक वातावरण में बिना विशेष पोषण के फूल, फल देने की क्षमता रखता है उसी प्रकार स्त्री अपने परिवार को सद्‌गुणों रूपी फलों से सजाकर सन्तान रूपी फल तथा कांटों के समान प्रहरी बना सुरक्षा प्रदान करती है।

डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त के अनुसार क्वार मास के कृष्णपक्ष में क्वांरी कन्याएं मामुलि या माहुलिया खेलती हैं। लोक प्रचलित शब्द है – ''मामुलिया खल रयीं'' जिससे वह एक खेल प्रतीत होता है। लेकिन जब कन्यायें बेरी की कांटेदार शाख लेकर उसे विभिन्न प्रकार के पुष्पों से सजाकर और फल, मेवादि खोंसकर लंहगा एवं ओढ़नी में मानवीकृत कर देतीं हैं तथा लिपे स्थान पर चौक पूरकर उसे प्रतिष्ठित करने के बाद हल्दी, अक्षत, पुष्पादि से पूजतीं हैं और अठवाई, पंजीरी, हलुआ, फलादि का भोग लगाती हैं, तब वे देवी सिद्ध होती हैं और पूरा खेल उनकी उपासना हो जाती है। अतएव मामुलिया की पहचान एक प्रमुख समस्या है। यदि वह नारीरूपा मानती है, तो यह निश्चित है कि कन्याएं उसकी पूजा नहीं कर सकतीं, क्योंकि बुन्देलखण्ड में कन्या के चरण–स्पर्श सभी स्त्री–पुरुष करते हैं। यह बात अलग है कि मामुलिया कोई सती या विशिष्ट आदर्श की प्रतीक नारी हो, जैसा कि एक गीत की पंक्ति से लगता है –

मामुलिया के आ गये लिबौआ,
झमक चली मोरी मामुलिया।

मामुलिया में नारीत्व की प्रतीकात्मकता तो है, जैसे पुण्यों की कोमलता, सुन्दरता और प्रफुल्लता, कांटों की प्रखरता, संघर्षशीलता और वेदना तथा फलों की सृजनशीलता, उदारता और कल्याण की भावना सब नारी में निहित है। इन गुणों के साथ उसमें पतिव्रत्य की साधना के लिए पूरी–प्री तत्परता है। सतीत्व की संकल्पधर्मिता के कारण वह नारी का

अनुकरणीय मॉडल बन जाती है। इस प्रकार की समन्विता नारीमूर्ति देवी ही है। संजा को देवीरूपा माना गया है, इस दृष्टि से मामुलिया को देवी की लोकमान्यता निश्चित ही मिली थी।

एक प्रतीकात्मकता यह भी है कि पुष्प रूपी सुख और कांटे रूपी दुःख से यह जीवन बना है। जीवन का जब तक श्रृंगार होता है, तब तक उसके लिबौआ (विदा कराने वाले) आ जाते हैं। यह क्षणभंगुरता जीवन की अस्थिरता को सांकेतित करती है। इस प्रकार मामुलिया में दार्शनिक महाबोल की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति हुई है, इसीलिए इसे महाबुलिया, माहुलिया कहा जाता है।

(8) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के अधिकारी व्यक्ति और अभ्यर्थी कौन हैं? क्या इन व्यक्तियों की विशेष भूमिका है या कोई विशेष दायित्व है। इस परम्परा और प्रथा के अभ्यास एवं अगली पीढ़ी के संचरण के निमित्त अगर हैं, तो वे कौन हैं और उनका दायित्व क्या है?

प्रस्तुत योजना के सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों में संबद्ध क्षेत्र का समस्त जनमानस है जो जनरंजन के लिए इन परम्पराओं का निर्वहन करते हैं। इनमें भागीदारी करने वाले को लाभान्वित होते ही है। साथ ही दर्शक–दीर्घा पर भी इसका प्रभाव पड़ता है।

ekeqfy;k vkSj Vslw ls laca/k %&

बुन्देलखण्ड जनपद बहुत बड़ा है, अतएव उसके लोकोत्सवों के स्वरूप में विविधताएं हैं। दतिया की तरफ ढ़िरिया मांगना चतुर्दशी तक चलता है और पूर्णिमा को अन्त्येष्टि–भोज होता है। पड़ा सुअटा की गर्दन काट देता है। उरई–जालोन तरफ नवमीं से चौदस तक टेसू खेला जाता है और पूर्णिमा को टेसू तथा ढ़िरिया या झिझिया का विवाह होता है। एक लोककथा के अनुसार झिझिया सुअटा की पुत्री थी, जिसे देखकर टेसू नामक वीर आकर्षित हुआ था। वह सुअटा को हराकर झिंझिया से विवाह कर लेता है। उसी अवसर पर सुअटा के अंग–भंग कर उसे लूट जाता है। इसी तरह मामुलिया और सुअटा को बहिन भाई मानकर कथा की एकसूत्रता सिद्ध की जाती है।

लोककथाकार कथा का विस्तार करने में बहुत कुशल होता है। वह पात्रों के संबंधों की स्थापना से कथा को अन्वित कर देता है। काल–संकलन भी उसमें सहायक हुआ है। पहले मामुलिया फिर सुअटा और उसके बाद टेसू। दूसरे मामुलिया और सुअटा क्वांरी लड़कियां ही खेलती हैं। इस कारण भी जुड़ाव हुआ है।

(9) ज्ञान और हुनर कुशलता का वर्तमान में संचारित तत्वों के साथ क्या अंतःसंबंध है?

लोक कलाएं तो सभी की प्रिय होतीं हैं लेकिन इनमें कौशल या महारथ विरलों को ही प्राप्त होता है। लोककलाओं में हरेक बिन्दु व्यक्ति के कौशल पर आधारित होता है। अगर पूरा दल कोई नृत्य प्रस्तुत कर रहा है तो उसमें कुछ नर्तक ऐसे भी होते हैं जो समूह में ही प्रस्तुति देने के बाद अलग दिखते हैं। उनका पदचालन बड़ा चित्ताकर्षक होता है। कारण उनके प्रस्तुति का ढ़ंग, उसमें उनका कौशल, लगन तथा ताल के बहुत नजदीक रहकर उसकी प्रस्तुति। इसी तरह से गायन में भी अच्छे गायक अलग ही होते हैं। वादन में वादक को अलग से पहचाना जा सकता है। वाद्यों की निर्माण विधि, गायन विधि एवं नृत्य संरचना आदि।

हमने देखा कि मामुलिया में कौशल की महत्वपूर्ण भूमिका है अतः किसी भी कलारूप में कौशल आवश्यक है अर्थात् कौशल एवं कला का महत्वपूर्ण संबंध है।

(10) आज वर्तमान में संबंधित समुदाय के लिए इन तत्वों का सामाजिक व सांस्कृतिक आयोजन क्या मायने रखता है?

वर्तमान में सामाजिक व सांस्कृतिक आयोजन करने से हमारी लुप्त सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण, संवर्द्धन होता है। वर्तमान में आधुनिकीकरण एवं पाश्चात्यीकरण के शोर–शराबे से हटकर ये कायक्रम हमें मानसिक सुकून प्रदान करते हैं। इनसे समाज को जोड़ने का कार्य संभव है। इनसे जातिभेद, वर्गभेद दूर होते हैं और आपसी भाईचारा स्थापित होता है।

(11) क्या योजना के प्रस्तावित/परम्परा के तत्वों में ऐसा कुछ है जिससे प्रतिपादित अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार के मानकों के प्रतिकूल माना जा सकता है या फिर जिसे समुदाय, समूह या फिर व्यक्ति के आपसी सम्मान को ठेस पहुंचती हो या फिर वे उनके स्थाई विकास को बाधित करते हो। क्या प्रस्तावित योजना के तहत् या फिर सांस्कृतिक परम्परा में ऐसा कुछ है जो देश के कानून या फिर उनसे जुड़े समुदाय के समन्वय को या दूसरों को क्षति पहुंचाती हो, विवाद खड़ा करती हो?

प्रस्तुत योजना के तत्वों में ऐसा कुछ नहीं है जो अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार के मानकों के प्रतिकूल है। इससे न ही किसी समुदाय, समूह या व्यक्ति के आपसी सम्मान को ठेस पहुंचती है, न ही स्थायी विकास वाधित होते हैं। लोक कलाओं से देश के कानून को न ही किसी तरह की क्षति पहुंचती है तथा न ही कोई विवाद खड़ा हो सकता है।

(12) प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा की योजना क्या उससे संबंधित संवाद के लिए पारदर्शिता, सजगता और प्रोत्साहन को सुनिश्चित करती है?

हाँ, पूर्णरूपेण करती है।

(13) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के संरक्षण के लिए उठाये जाने वाले उपायों, कदमों, प्रयासों के बारे में जानकारी में जो उसको संरक्षित या संवर्धित कर सकते हैं –

1) औपचारिक एवं अनौपचारिक तरोके से प्रशिक्षण (संचरण)

2) पहचान, दस्तावेजीकरण एवं शोध

3) रक्षण एवं संरक्षण

4) संवर्धन एवं बढ़ावा

5) पुनरुद्धार/पुनर्जीवन

उपरोक्त दिये गये तमाम उपाय, कदम इस परम्परा को संरक्षित, संवर्द्धित करने के उद्देश्य से आवश्यक हैं जो कि त्वरित रूप से इस कला रूप के संरक्षण हेतु लागू किये जायें।

(14) स्थानीय राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत, परम्परा के तत्वों के संरक्षण के लिए अधिकारियों ने क्या उपाय किये? उनका विवरण दें।

स्थानीय राज्य एवं राष्ट्रीय स्तर पर योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत, परम्परा के तत्वों के संरक्षण के लिए उपाय –

स्थानीय स्तर पर कुछ शहरी क्षेत्रों में सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रदर्शन संबंधी संस्थायें हैं जो नृत्य रूपों को तैयार करके स्थानीय, राज्य, राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रस्तुतियां देकर उस विधा के संरक्षण में अपना योगदान देते हैं। बुन्देलखण्ड अंचल में ऐसी अनेक संस्थायें हैं जो इस कार्य में संलग्न हैं। राज्य स्तर पर देश में कई अकादमियां स्थित हैं, जो लोक कलाओं के प्रदर्शन, लोकोत्सवों के माध्यम से करवाकर उनके संरक्षण में योगदान देती हैं। देश में ऐसे कई संस्थान हैं जो वाचिक परम्परा के रूपों के संरक्षण का कार्य कर रहे हैं। इसी तरह से राष्ट्रीय स्तर पर भी लोकनृत्यों,

लोकगीतों, लोक संगीत तथा लोक शिल्प के विविध रूपों की प्रदर्शनी प्रस्तुति करवाकर उनका संरक्षण, संवर्धन कर रहे हैं।

(15) योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के व्यवहार जीवन्तता और भविष्य को क्या खतरे है? वर्तमान परिउद्देश्य के उपलब्ध साक्ष्यों और संबंधित कारणों का ब्यौरा दें।

योजना के प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के व्यवहार, जीवन्तता ओर भविष्य को होने वाले खतरे तथा उनके कारण निम्नानुसार हैं –

वर्तमान समय में आधुनिकता का ऐसा प्रभाव है जिसके चलते हमारी प्राचीन सांस्कृतिक धरोहर को छति पहुंची है। फिल्म, टी.व्ही. सीरियल और अन्य मनोरंजन से साधन आज देश क कौने–कौन में मौजूद हैं और उनमें जो भी परोसा जाता है वह सब देखकर लोग आज उनके अनुरूप ही चलना चाहते हैं। वे पुरानी घिसी–पिटी रूढ़ियों को नकारने लगे हैं, यहां तक कि लोग अपनी मूल बोली को भी नहीं अपनाना चाहते, यह मीडिया का ही प्रभाव है जो सिर चढ़कर बोल रहा है। हमें यह विदित नहीं है कि हम इसके प्रभाव में अपनी बहुमूल्य सांस्कृतिक धरोंहर को भूल रहे हैं। आज हम न तो लोकगीत सुनना पसंद करते हैं न ही लोकनृत्य या लोक संगीत को। हम उसके बजाय कम्प्यूटराइज्ड म्यूजिक को ज्यादा पसंद करने लगे हैं। यह सोच भविष्य के लिए एक बहुत बड़ा खतरा है। अगर हम अपनी विरासत को सहेजना चाहते हैं तो हमें उसमें रूचि लेनी पड़ेगी।

(16) संरक्षण के क्या उपाय अपनाने का सुझाव है? (इसमें उन उपायों को पहचान कर उनकी चर्चा करें जिससे कि प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों के संरक्षण और संवर्धन को बढ़ावा मिल सके) ये उपाय ठोस हों जिससे भविष्य की सांस्कृतिक नीति के साथ आत्मसात किया जा सके ताकि प्रस्तावित सांस्कृतिक परम्परा के तत्वों का राज्य स्तर पर संरक्षण किया जा सके।

संरक्षण के उपाय एवं सुझाव –

हमें अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करना है तो उसे कई रूपों में सुरक्षित रखा जा सकता है। जैसे – उनका प्रदर्शन, उन कलारूपों का दस्तावेजीकरण, फिल्मांकन, ध्वन्यांकन, उनका प्रचार–प्रसार आदि ऐसे कारक हैं जिनसे कि इनका संरक्षण, संवर्द्धन हो सकेगा। उनके प्रदर्शन को देखकर हम उनसे प्रभावित होंगे और उनके मूल के बारे में जान पावेंगे। इन कलारूपों का दस्तावेजीकरण होगा तो वे किसो न किसी प्रकार से सुरक्षित, संरक्षित तो रहेंगे। इसी तरह से फिल्मांकन एवं ध्वन्यांकन भी एक कारगर उपाय है। संचार माध्यमों ने आकाशवाणी, दूरदर्शन, पेपर, पत्रिकायें भी इनके संरक्षण में महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं।

विवेच्य कलारूप के संरक्षण के उपाय :–

1. मामुलिया को कार्यशाला लगाई जाये, जिससे इच्छुक कलाकारों की जानकारी हो सके।
2. स्थानीय स्तर पर मामुलिया प्रदर्शन हेतु मंच निर्माण कराये जायें, जहां प्रस्तुतियां हो सकें।
3. मामुलिया के गीतों का दस्तावेजीकरण अत्यावश्यक है।
4. लोकोत्सवों में मामुलिया की भागीदारी सुनिश्चित हो तथा चयनित कलाकारों को आमंत्रित किया जाये।
5. संबंधित व्यक्तियों को छात्रवृत्ति प्रदान की जाये इससे नयी पीढ़ी को प्रोत्साहन मिलेगा तथा प्राढ़ कलाकारों को प्रशिक्षण दिये जाने में रूचि होगी।
6. बुन्देलखण्ड अंचल के मामुलिया के प्रशिक्षण हेतु प्रशिक्षण केन्द्र खोला जाये।
7. मामुलिया प्रतियोगिताओं का आयोजन हो, जिससे एक ही स्थान पर बहुतेरे कलाकार एकत्रित हों, वे एक–दूसरे के नृत्य को देखकर अपने कलारूप में महारथ हासिल कर सकें।

8. संबंधित संस्थाओं जो इस क्षेत्र में संलग्न हैं, उन्हें प्रोत्साहन दिया जाये।

9. कलारूप को व्यवसायिक बनाने के साथ–साथ उस समुदाय विशेष को भी स्थानीय व्यवसाय के नये रास्ते खोले जायें, उपाय सोचे जायें।

10. चयनित कलारूप की ज्ञान परिपाटी और लोक ज्ञान परम्परा को अनिवार्य शिक्षा के रूप में स्कूल, कालेज स्तर पर लागू किया जाये।

11. विचार गोष्ठियों का आयोजन किया जाये एवं सांस्कृतिक चेतना के उद्देश्य से इसे पत्रकारिता से जोड़ा जाये।

(17) सामुदायिक सहभागिता (प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों के संरक्षण की योजना में समुदाय, समूह, व्यक्ति की सहभागिता के बारे में लिखें)।

सामुदायिक सहभागिता द्वारा संरक्षण –

लाक कलायें समूह की कलायें हैं, ये न तो व्यक्तिगत होती हैं न ही इनका उद्देश्य व्यक्ति विशेष तक सीमित होता है। ये तो समूह की भावना को लेकर चलतीं हैं इसीलिए समाज के लिए ये बड़ी महत्वपूण हैं। इनके किसी भी रूप को देखें तो वह समूह द्वारा ही संपादित होता है, जसे नृत्य, गायन, वादन, शिल्प या अन्य कोई कौशल। ये समूह में ही नहीं होते हैं। इसलिए इनका संरक्षण समुह की सहभागिता द्वारा हो सकता है। कला के कुछ रूप जातिगत् होते हैं। जिनको एक विशेष जाति द्वाराकिया जाता है। जैसे ढ़िमरयाई, काड़रा, कछयाई, अहिराई आदि इनके संरक्षण का दायित्व उस समुदाय विशेष का होगा जो उस रूप से संबद्ध है। लेकिन किसी भी कला का संरक्षण समूह के बिना संभव नहीं हो सकता। इसमें व्यक्ति की सहभागिता हो सकती है लेकिन वह भी अपना समूह बनाये तब ही अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकेगा।

सहभागी व्यक्ति :–

1. डॉ. कपिल तिवारी : पूर्व निर्देशक आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल (म.प्र.)
2. श्री राहुल रस्तोगी : कार्यक्रम अधिकारी, लोक परिषद भोपाल
3. बसंत निरगुणे : पूर्व प्रधान संपादक चौमासा, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल
4. अशोक मिश्र : प्रधान संपादक, म.प्र. आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल
5. श्री प्रेम स्वरूप तिवारी : कार्यक्रम अधिकारी, दक्षिण मध्यक्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, नागपुर

6. श्री विनय उपाध्याय : संपादक, रंग संवाद पत्रिका भोपाल

7. श्री नवल शुक्ल : पूर्व संपादक चौमास, भोपाल

मामुलिया के पूर्व एवं वर्तमान सहभागी महिला व्यक्तियों के नाम :–

1. श्रीमति शकुन्तला मिश्रा, मेंगवां

2. श्रीमति अरूणा चौबे, सागर

3. श्रीमति चन्दा चौबे, हरदौट

4. श्रीमति मुन्नी तिवारी, मझगुवां

5. श्रीमति रचना तिवारी, गढ़ाकोटा

6. श्रीमति सुमन दीक्षित, झांसी

7. श्रीमति संध्या तिवारी, दमोह

8. श्रीमति सीमा शुक्ला, सागर

9. श्रीमति प्रतिभा जैन

10. श्रीमति मंजू सेन, हीरापुर

(18) संबंधित समुदाय के संघठन (नों) या प्रतिनिधि (यों) (प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों से जुडे हर समुदायिक संगठन या प्रतिनिधि या अन्य गैर सरकारी संस्था जैसे कि एसोसिएशन, आर्गेनाइजशन, क्लब, गिल्ड, सलाहकार समिति, स्टीयरिंग समिति आदि)

विवेच्य विषय से संबंधित देश में कई संगठन हैं जो प्रदेश, स्थानीय, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर इनके संरक्षण, संवर्द्धन विषयक काम कर रहे हैं। हमारे देश में सात कल्चरल जोन हैं जो अपने क्षेत्र के अनुसार कला रूपों

का प्रदर्शन, प्रस्तुति, दस्तावेजीकरण, फिल्मांकन, ध्वन्यांकन, प्रचार–प्रसार आदि के द्वारा कर रहे हैं। स्थानीय स्तर पर भी कई सांस्कृतिक संगठन, अकादमी तथा एन.जी.ओ. हैं।

सहभागी व्यक्ति :–

1. डॉ. कपिल तिवारी : पूर्व निर्देशक आदिवासी लोक कला परिषद् भोपाल (म.प्र.)
2. श्री राहुल रस्तोगी : कार्यक्रम अधिकारी, लोक परिषद भोपाल
3. बसंत निरगुणे : पूर्व प्रधान संपादक चौमासा, म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, भोपाल
4. अशोक मिश्र : प्रधान संपादक, म.प्र. आदिवासी लोककला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल
5. श्री प्रेम स्वरूप तिवारी : कार्यक्रम अधिकारी, दक्षिण मध्यक्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, नागपुर
6. श्री विनय उपाध्याय : संपादक, रंग संवाद पत्रिका भोपाल
7. श्री नवल शुक्ल : पूर्व संपादक चौमास, भोपाल

(19) किसी मौजूदा इन्वेंटारी, डेटाबेस या डाटा क्रिएशन सेंटर (स्थानीय/राज्यकीय/राष्ट्रीय) की जानकारी जिसका आपको पता हो या आप किसी कार्यालय, एजेन्सी, आर्गेनाईजेशन या व्यक्ति की जानकारी को इस तरह की सूची को संभाल कर रखता हो, उसकी जानकारी दें।

मौजूदा इन्वैटरी, डेटाबेस या डाटा क्रिएशन सेन्टर की जानकारी रखने वाली संस्थाएं –

1. मध्यप्रदेश आदिवासी लोक कला एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल
2. कला परिषद, भोपाल
3. दक्षिण मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, नागपुर
4. उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद
5. आदिवर्त, खजुराहो
6. केशव शोध संस्थान, ओरछा
7. बुन्देली विकास परिषद, बसरी, छतरपुर
8. वन्या प्रकाशन, भोपाल

(20) के प्रस्ताव सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों से संबंधित प्रमुख प्रकाशित संदर्भ सूची या दस्तावेज (किताब, लेख, ऑडियो–विसुअल सामग्री, लाइब्रेरी, म्यूजियम, प्राइवेट सहृदयों संग्राहकों, कलाकारों/व्यक्तियों के नाम और पत तथा वेबसाइट आदि जो संबंधित सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों के बारे में हों।

प्रस्तावित सांस्कृतिक विरासत/परम्परा के तत्वों से संबंधित प्रमुख प्रकाशन –

1. चौमासा, आदिवासी लोक कला परिषद् एवं बोली विकास अकादमी, भोपाल
2. बुन्देली बसंत, बसारी, छतरपुर
3. बुन्देली अर्चन, दमोह
4. मामुलिया, छतरपुर
5. ईसुरी, हिन्दी विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर
6. बुन्देली दर्शन, हटा
7. तुलसी अकादमी, भोपाल
8. मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल
9. कला संगम, उत्तर मध्यक्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद

व्यक्तिगत विवरण

नाम	:	डॉ. बहादुर सिंह परमार
पिता का नाम	:	श्री रंधीर सिंह परमार
पद	:	प्राध्यापक (हिन्दी विभाग)
पदांकन स्थल	:	प्रभारी प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, राजनगर, जिला छतरपुर (म.प्र.)
जन्म तिथि	:	04 जुलाई, 1962
शक्षणिक योग्यता	:	एम.ए. (हिन्दी व अर्थशास्त्र), पी–एच.डी.
प्रथम नियुक्ति	:	26.11.1993, लोक सेवा आयोग से चयनोपरान्त
अनुभव	:	22 वर्ष (स्नातक व स्नातकोत्तर)
निवास	:	एम.आई.जी.–7, न्यू हाउसिंग बोर्ड कालोनी, पन्ना रोड़ छतरपुर (म.प्र.)
फोन नं.	:	07682–244133
मोबा. नं.	:	9425474662, 9755468989
ई–मेल	:	bsparmar1962@gmail.com
विशेषज्ञता	:	बुन्देली लोक साहित्य, संस्कृति एवं इतिहास
शोध का विषय	:	हिन्दी कथा साहित्य, मरकांत का कथा साहित्य अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

अन्य विवरण :–

1. यू.जी.सो. के सहयोग से निम्नलिखित चार लघु शोध परियोजनाओं पर कार्य कर उन्हें पूर्ण किया –
   (1) छतरपुर जिले का आधुनिक फाग साहित्य
   (2) छतरपुर जिले की लोककथाओं का संकलन
   (3) बुन्देली की विलुप्त होती शब्दावली
   (4) बुन्देली संस्कार गीत
2. प्रकाशित पुस्तकें –
   (1) अमरकांत का कथा साहित्य (शिल्पायन प्रकाशन, नई दिल्ली, 2007)
   (2) बुन्देलखण्ड में छन्दबद्ध काव्य परम्परा (म.प्र. आदिवासी लोक कला अकादमी, भोपाल, 2005)
   (3) 1857 के पहले बुन्देलखण्ड में अंग्रेजों से संघर्ष (राजकीय संग्रहालय, झांसी, 2007)
   (4) आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी : सृजन के विविध आयाम (महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर)

(5) बुन्देली व्यंजन (बुन्देली विकास संस्थान, बसारी, 2004)

(6) बुन्देलखण्ड की साहित्यिक धरोहर (बुन्देली विकास संस्थान बसारी, 2002)

(7) छतरपुर जिले की बुन्देली लोक कथायें (महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर, 2006)

(8) लोक साहित्य में मानव मूल्य (महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर, 2011)

3. प्रकाशित शोध पत्र व आलेख :–

(1) ''प्रतिभा के कवि आचार्य बिहारी लाल भट्ट'' – राष्ट्र गौरव : बुन्देली बांकुरे, 1994

(2) ''भारतीय संस्कृति की व्यापकता'' – अभ्युदय, अंक मार्च 1995

(3) ''महाकवि काली'' राष्ट्र गौरव : बुन्देली बांकुरे, 1994

(4) ''छतरपुर के मध्ययुगीन भक्त कवि'' : चौमासा वर्ष 2013–14, संयुक्त अंक 42–4, मार्च–जून 1997 (प्रकाशक – म.प्र. आदिवासी लोक कला परिषद, पृ. 43–48)

(5) ''पंचायती राज में नव शक्ति केन्द्रां का उदय'' : शोध वीथिका – 9–10 मार्च, 1998, पृ. 6 (प्रकाशक – महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर)

(6) ''हिन्दी और पत्रकारिता'' संवादों के दायरे में – 1998
(प्रकाशक–बुन्देलखण्ड सांस्कृतिक एवं सामाजिक सहयोग परिषद्, छतरपुर

(7) ''परिवर्तन से उपजी पीड़ा'' – वागथं अंक 55, नवम्बर, पृ. 11
(प्रकाशक–भारतीय भाषा परिषद्, कोलकाता)

(8) ''बुन्देलखण्ड का दरकता लोकजीवन'' मड़ई, 10, (1996)

(9) ''भाषा और लोकभाषा'' : हंस, वर्ष 15, अंक 6, जनवरी 2001, पृ. 55
(प्रकाशक : अक्षर प्रकाशन प्रा.लि. नई दिल्ली)

(10) ''छतरपुर जिले के दर्शनीय स्थल'' सारस्वत, 2001, पृ. 36–39
(प्रकाशक : सरस्वती विद्या मंदिर इंटर कॉलेज, उरई)

(11) ''बुन्देली संस्कृति का बदलता स्वरूप'', चौमासा, वर्ष 20, अंक 63, फरवरी, 2004

(12) ''विषद बांसुरी की टेर'' : अक्षत, अंक 20–11, 2004–05
(प्रकाशक : नवगीत व ललित निबंध पत्रिका, खण्डवा (म.प्र.)

(13) बुन्देली संस्कृति का बदलता स्वरूप : चौमासा, अंक 63, फरवरी, 2004
(प्रकाशक : म.प्र. आदिवासी लोक कला अकादमी, भोपाल)

(14) समकालीन हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य : रिसर्च लिंग अंक 25, वर्ष 2006
(प्रकाशक : 11, वर्धमान अपार्टमेंट, ओल्ड पलाशिया रोड़, इन्दौर)

(15) बुन्देली लोक साहित्य के पर्याय : डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त 'ईसुरी', अंक 15, वर्ष 2006 (प्रकाशक : बुन्देली पीठ, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर)

(16) हिन्दी साहित्य में बुन्देली का योगदान, 'स्मारिका 2007'
(प्रकाशक : भारतोय राजभाषा विकास संस्थान, देहरादून (उत्तराखण्ड)

(17) बुन्देली का लोक सांस्कृतिक वैभव : स्पंदन, अंक 3, नवम्बर, 20, फरवरी 08
प्रकाशक : 110, रामनगर, उरई)

(18) बेजुवानों की जुबान हैं ग्रामीण जी, 'पगडंडी' 10 फरवरी, 2008
(प्रकाशक : म.प्र. प्रगतिशील लेखक संघ, नागौद)

(19) बुन्देलखण्ड के लोकोत्सव, 'त्रिशताब्दी स्मारिका' 2008
(प्रकाशक : छतरपुर त्रिशताब्दी समारोह स्मारिका समिति, छतरपुर)

(20) बुन्देली लोक संस्कृति का बदलता स्वरूप : 'आखरमाटी', मई–अगस्त 2008, पृ. 23–25 (प्रकाशक : बुन्देली फाउण्डेशन, ग्वालियर)

(21) बुन्देलखण्ड में स्वाधीनता की अग्निशिखाएं : महाकोशल संदेश, जून 2008, पृ. 51–58 (प्रकाशक : विश्व संवाद केन्द्र महाकौशल, जबलपुर)

(22) ''बुन्देली लोक संस्कृति'' : ईसुर 2009, पृ. 143–146
(प्रकाशक : बुन्देली पीठ, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

(23) ''मधुरोपासक भक्त कवि हरिराम व्यास'' : 'स्पंदन', नवम्बर 2008, पृ. 6–8
(प्रकाशक : माया सिंह, एम.पी. नगर, भोपाल)

(24) ''बुन्देलखण्ड की प्रमुख जलोक कलाएं'' : सृजन की ऑच, दिसम्बर 2008, पृ. 6–8 (प्रकाशक : माया सिंह, एम.पी. नगर, भोपाल)

(25) ''आतंकवाद एवं अन्तर्राष्ट्रीय समस्या'' : नवलय अनुबोध, फरवरी 2009
(प्रकाशक : नवलय, महाराणा प्रताप नगर, भोपाल)

(26) ''रंग–बिरंगे पत्थरों के बीच दुग्ध धवल प्रवाह'' : म.प्र. संदेश, अप्रैल, 2009, पृ. 6–8 (प्रकाशक : जनसम्पर्क संचालनालय, भोपाल)

(27) ''ईसुरी का समाज बोध'' ईसुरी, अंक–17, वर्ष 2009–10, पृ. 27–31
(प्रकाशक : बुन्देली पीठ, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर)

(28) ''सहज व एक निष्ठ प्रेम के समर्थक मधुरोपासक भक्त कवि हरिराम व्यास'' मालवा स्ट्रीट, अंक 08, अक्टूबर 2009, पृ. 34–36 (प्रकाशक : डॉ. लक्ष्मी नारायण शोभन, गुना)

(29) ''बुन्देलखण्ड का साहित्यिक वैभव'' बुन्देली अर्चन, 2010, पृ. 81–83
(प्रकाशक : बुन्देलखण्ड लोक संस्कृति सेवा मंच, दमोह (म.प्र.)

(30) ''लोक कवि ईसुरी के काव्य में समाज की पीड़ा'' : बुन्देली दर्शन, 2011, पृ. 12–26 (प्रकाशक : नगर पालिक परिषद्, हटा, जिला दमोह)

(31) ''बदलता बुन्देली समाज और गायब होते शब्द'' : जनजाति बोलियां, लोक भाषा एवं संस्कृति, 2010, पृ. 28–33

(32) ''महाराज छत्रसाल का सामान्य परिचय'' : छत्रसाल दर्शन, जून–2011, पृ. 10–15 (प्रकाशक : योगेन्द्र प्रताप सिंह, छतरपुर)

4. लघु शोध निर्देशन :–

(1) बुन्देली कवि घासीराम व्यास के काव्य में राष्ट्रीय चेतना : प्रज्ञा गुप्ता (1998)

(2) आचार्य ज्ञानसागर की हिन्दी साहित्यिक कृतियों का अनुशीलन : कु. प्रभा सिंघई (1998)

(3) डॉ. गंगा प्रसाद बरसैयां की व्यंग्य रचना धर्मिता : कु. अंजलि गुप्ता (1999)

(4) डॉ. कांति खरे का रचना संसार : कु. वंदना सारस्वत (2000)

(5) काशी नायक की कहानियों में वर्गीय चेतना, कु. सीमा सक्सेना (2000)

(6) बुन्देली कवि संतोष सिंह बुन्देला के गीतों का अनुशीलन : मनोज कुमारी (2003)

(7) डॉ. ज्ञान चतुर्वेदी की रचनाओं में सामाजिक चेतना : प्रगति तिवारी (2003)

(8) बुन्देली कवि गोपालदास रूसिया के काव्य का अनुशीलन : तृप्ति तिवारी (2004)

(9) प्रगति कवि श्री प्रमोद पाण्डेय : एक विश्लेषण, मनोज जैन (2004)

(10) सीताराम चतुर्वेदी 'अटल' का रचना संसार : रवीन्द्र तिवारी (2004)

(11) नई कविता और कवि श्री राजबहादुर सिंह : राजेन्द्र सिंह (2005)

(12) श्री निवास शुक्ल का काव्य वैशिष्ट्य : सत्या घोष (2005)

(13) बुन्देली कवि नवल किशोर सोनी 'मायूस' के काव्य का अध्ययन : अजय खरे (2006)

(14) कवि काशी प्रसाद महतों का काव्य वैशिष्ट्य : शुभ्रा गुप्ता (2006)

(15) कवि लक्ष्मी प्रसाद गुप्त के काव्य का अनुशीलन : नीतू चौरसिया (2005)

5. सम्पादन :–

(1) 'बुन्देली बसंत' के 15 अंक

(2) जन विमर्श

(3) बुन्देलखण्ड का जलियां वाला बाग : चरण पादुका

(4) जगदीश्वर के जनगीत

(5) दशार्णा के आठ अंक

(6) शोधा बीथिका : महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर

(7) 'बुन्देलखण्ड का इतिहास' 12 भाग

(8) अभिनन्दन ग्रंथ : विंध्य कोकिल, पं. भैयालाल व्यास

(9) स्मृति शेष : डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त

(10) सारस्वती

(11) अभिनंदन ग्रंथ : श्री श्रीनिवास शुक्ल

(12) श्री सरस्वती सदन स्मारिका

(13) छत्रसाल दर्शन, 2003

6. शोध निर्देशन :–

(अ) शोध उपाधियां प्रदत्त –

(1) बुन्देली लोक साहित्य में दलित चेतना : डॉ. उमेश चन्द्र शाक्य

(2) कथाकार पुन्नी सिंह के साहित्य में सामाजिक चेतना : डॉ. शैलेन्द्र सिंह

(3) बनाफरी बोली और सामाजिक स्तरों तथा संबंधों की भाषात्मक अभिव्यक्ति : डॉ. रामसेवक गुप्ता

(4) डॉ. गंगा प्रसाद बरसैंयां का व्यक्तित्व और रचना : डॉ. केशकांति चौरसिया

(5) हिन्दी कथा साहित्य में बुन्देली लोक संस्कृति : डॉ. राजेन्द्र सिंह

(6) 20वीं शताब्दी के अन्तिम दशक के हिन्दी उपन्यासों में स्त्री चेतना : डॉ. सत्या घोष

(7) स्वातंत्र्योत्तर बुन्देली कविता में सामाजिक चेतना : डॉ. अजय खरे

(8) काशीनाथ सिंह की रचनाओं का कथ्य एवं शिल्प : डॉ. सविता गुप्ता

(ब) शोध निर्देशन जारी –

(1) दुष्यंत कुमार के बाद हिन्दी गजल : ज्योत्साना दुबे

(2) शानी के कथा साहित्य में वस्तु रूप : अरविन्द नायक

(3) बुन्देली लोक कविता में श्रृंगार भंजना : प्रभा रैकवार

(4) अश्विनी कुमार दुबे के कथा साहित्य का अध्ययन : रमेश अनुरागी

7. साहित्यिक गतिविधियां :–

(1) कार्यकारिणी सदस्य, म.प्र. प्रगतिशील लेखक संघ, भोपाल

(2) संयोजक, पाठक मंच, म.प्र. साहित्य अकादमी, भोपाल

(3) संयोजक एवं जिला अध्यक्ष, म.प्र. राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

(4) कार्यकारिणी सदस्य, बुन्देली विकास संस्था, बसारी

(5) कार्यकारिणी सदस्य, म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन, भोपाल

8. उपलब्धियां :–

(1) म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा आलोचना का वागीश्वरी सम्मान प्राप्त

(2) वीरेन्द्र केशव साहित्य परिषद, टीकमगढ़ द्वारा बुन्देल रत्न की उपाधि

(3) राष्ट्रभाषा प्रचार समिति देहरादून द्वारा सम्मानित

(4) राष्ट्रपति का कांस्य पदक जनगणन प्रशिक्षण हतु प्राप्त

(5) म.प्र. शासन, उच्च शिक्षा विभाग द्वारा उत्कृष्ट प्राध्यापक का प्रमाण पत्र।

9. प्रशासनिक अनुभव :–

(1) स्वशासी योजना के तहत् परीक्षा उपनियंत्रक गोपनीय का दो वर्ष का अनुभव एवं वर्तमान में इस पर पर कार्यरत्।

(2) जिला संगठक राष्ट्रीय सेवा योजना, छतरपुर

10. आकाशवाणी से दर्जनों आलेख परिचर्चाएं व वार्तायें प्रसारित।

11. देश के विभिन्न कोनों में शोध संगोष्ठियों में भागीदारी।

12. समय समाज और आज की हिन्दी कहानी, आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी : सृजन के विविध आयाम, 20वीं शताब्दी के अन्तिम दशक के हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक सरोकार, लोक साहित्य में मानव मूल्य, राष्ट्रीय शोध संगोष्ठियों के आयोजन सचिव के रूप कार्य।

O;fDrxr fooj.k

नाम	:	डॉ. सरोज गुप्ता, अध्यक्ष हिन्दी विभाग शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
सहायक प्राध्यापक	:	शासकीय सेवा में नियुक्ति दिनांक 29.11.1989
पति का नाम	:	डॉ. हरिमोहन गुप्ता, सीनियर साइन्टिफिक ऑफीसर फॉरेन्सिक साइन्स लैबोरेटरी, सागर (म.प्र.)
शैक्षणिक योग्यता	:	एम.ए. (हिन्दी साहित्य) बी.एड. बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी (उ.प्र.) पी–एच.डी. निदेशक, डॉ. भगीरथ मिश्र, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
ओरिएन्टेशन कार्यक्रम	:	30.08.1993 से 26.09.1993 डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
पुनश्चर्या पाठ्यक्रम	:	19.07.1996 से 08.08.1996 तक विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन 21.12.1998 से 10.01.1999 तक डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) 31.07.2000 से 20.08.2000 तक डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
प्री कमीशन	:	30 जून, 1998 से 27 सितम्बर 1998 A–ग्रेड एन.सी.सी. ऑफीसर्स ट्रेनिंग एकेडमी, ग्वालियर (म.प्र.)
रेफ्रेशर कोर्स	:	सितम्बर 2003, एन.सी.सी. ऑफीसर्स ट्रेनिंग एकेडमी, ग्वालियर

शोध कार्य विवरण :–

1. माइनर रिसर्च प्रोजेक्ट	:	विश्वविद्यालय, अनुदान आयोग, भोपाल (म.प्र.) एफ–4/40(2) 99, एम.आर.पी./सी.आर.ओ. राशि 25000/– वर्ष 1999 से 2001 तक विषय : बुन्देली के प्रमुख कवियों के साहित्य का अनुशीलन

2. माइनर रिसर्च प्रोजेक्ट : विश्वविद्यालय, अनुदान आयोग दिल्ली (भारत)
एफ–5–211/2003/एच.आर.पी. 2003
राशि 4,90,000 2003 से 2006
विषय : बुन्देली शब्दकोष निर्माण, अर्थद्योतन एवं शब्द परम्परा

शोध निर्देशन :– पी–एच.डी. उपाधि प्राप्त शोधार्थी

1. अरविन्द कुमार दीक्षित : 'अटल बिहारी वाजपेयी का व्यक्तित्व व कृतित्व'
2. अमिता जैन : 'हिन्दी महाकाव्य परम्परा में मूकमाटी का अनुशीलन'
3. वरदानी प्रजापति : 'टीकमगढ़ जिले की बोली का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन'
4. राजेश पाठक : 'कवि श्री रमाशंकर मिश्र की रचनाओं का समीक्षात्मक अध्ययन'
5. रघुनाथ पाल : 'साहित्य व संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में पं. गुणसागर सत्यार्थी के साहित्य का अनुशीलन'
6. निधि जैन : 'मध्य कालीन जैन काव्य परम्परा का सांस्कृतिक अनुशीलन'
7. दीपिका पाराशर : 'मैत्रेय पुष्पा के उपन्यासों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि स अनुशीलन'
8. दीपक विलगैंया : मध्यप्रदेश की हिन्दी पत्रकारिता में व्यंग्य स्तम्भ लेखन का विश्लेषण
9. अनुभूति सेन : 'प्रेमचंद के उपन्यास साहित्य में स्वाधीनता और सामाजिक आन्दोलन का अनुशीलन'
10. प्रीति गुप्ता : 'प्रेम शंकर – व्यक्तित्व व कृतित्व'
11. रश्मि जैन : 'शेखर जोशी का रचना संसार'

प्रकशन कार्य :– काव्य संग्रह कालचक्र, समीक्षा ग्रंथ –

(1) सियारामशरण गुप्ता के साहित्य में समाज व संस्कृति
(2) बुन्देली धरती सर्जना और सृजन
(3) बुन्देली संस्कृति और प्रमुख कवि
(4) लोक जीवन में बुन्देलखण्ड
(5) सृजन और समीक्षा

2. सम्पादन एवं संकलन :–
   (1) प्रेम पराग
   (2) अंक महिमा

(3) बुझौवल
(4) खेलगीत
(5) हमारा बुन्देलखण्ड
(6) स्वास्थ्य परक गीत
(7) माँ
(8) बेटियाँ
(9) समय
(10) अपनों के वातायन से – अभिनन्दन ग्रंथ
(11) सत्य से साक्षात्कार के कवि – अभिनन्दन ग्रंथ
(12) मुक्ति बोध
(13) मॉ–द्वितीय संस्करण
(14) साम्प्रदायिक सद्भाव एवं राष्ट्रीय एकीकरण
(15) सर्वधर्म सम्भाव

3. राष्ट्रीय सम्मान एवं प्रशस्ति पत्र :–
(1) रिसर्च लिंक सम्मान 2002–03
(2) हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग : प्रशस्ति पत्र 2006
(3) मैत्री पुरस्कार : आत्मीय विद्वत सम्मान, 2006
(4) भारतीय भाषा सम्मेलन : प्रशस्ति पत्र – भारत भाषा परिषद्, उज्जैन, 2006
(5) महादेवी स्मृति सम्मान : प्रयाग, 2007
(6) राष्ट्र सेवा नेशनल अवार्ड, सागर 2009
(7) सरस्वती श्री नेशनल अवार्ड, 2009
(8) हिन्दी भाषा भूषण : साहित्य मंडल श्रीनाथ द्वारा राजस्थान, 2010
(9) विशिष्ट हिन्दी सेवी सम्मान, दिल्ली 2011
(10) स्वामी विवेकानंद सम्मान, सागर 2012
(11) पदुमलाल पननालाल बख्शी सम्मान, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, सागर 2013
(12) राव बहादुर सिंह बुन्देला सम्मान, बसारी, छतरपुर, 2014
(13) हिन्दी सेवी सम्मान, जे.एम.डी. पब्लिकेशंस दिल्ली, 2014
(14) साहित्य गौरव सम्मान, दिल्ली, 2015
(15) राष्ट्र भाषा गौरव सम्मान, इलाहाबाद, 2015

laf{kIr thou ifjp;

नाम	:	विष्णु पाठक
पिता का नाम	:	श्री एन.पी. पाठक
जन्म तिथि	:	19 जून, 1935
जन्म स्थान	:	सागर (मध्यप्रदेश)
शिक्षा	:	एम.ए. प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातन सन् 1960
संप्रति	:	पूर्व विभागाध्यक्ष एवं संस्थापक निर्देशक युवक कल्याण एवं सांस्कृतिक गतिविधियां तथा प्रदर्शनकारी कला विभाग, डॉ. हरिसिंह गौर (पूर्व सागर विश्वविद्यालय) विश्वविद्यालय, सागर (म.प.)
पूर्व सचिव	:	श्रव्य एवं दृष्य शिक्षा विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
निर्देशक एवं संस्थापक	:	श्रव्य दृश्य अनुसंधान केन्द्र (ए.बी.आर.सी.) फिल्म निर्माण केन्द्र, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
संस्थापक एवं निर्देशक	:	लोक कला अकादमी, पद्माकर भवन बरियाघाट, सागर (म.प्र.)
दूरभाष नं.	:	07582–236224, मोबा.नं. 09826356766

उपलब्धियां संक्षिप्त में :–

देश की लोककलाओं विशेषकर लोकनृत्यों का प्रशिक्षण, प्रदर्शन, संरक्षण एवं संवर्धन के लिये पांच दशकों से कार्यरत् हैं और निःशुल्क सेवाएं दी हैं।

(1) डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर में एम.ए. के छात्र रहते हुए युवाओं को युवक कल्याण एवं सांस्कृतिक गतिविधियां तथा प्रदर्शनकारी कलाओं का विभाग स्थापिता किया। प्रथम विभागाध्यक्ष एवं संस्थापक।

(2) श्रव्य, दृश्य अनुसंधान केन्द्र (फिल्म निर्माण केन्द्र) ए.वी.आर.सी. की स्थापना की, संस्थापक निर्देशक के रूप में डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय में।

(3) देश की लोककलाओं के प्रशिक्षण, प्रदर्शन, संरक्षण एवं संवर्धन के लिए अलग से युवाओं को प्रशिक्षण देने के लिये लोककला अकादमी की स्थापना की।

(4) वर्ष 1956 से लेकर 2001 तक अखिल भारतीय अंतर

विश्वविद्यालयीन युवक समारोह, कामनवेल्थ युवक समारोह, अन्तर्राष्ट्रीय, निर्गुट देशों के युवक समारोह तथा अन्य युवक समारोहों में सामूहिक लोक नृतयों में युवाओं को प्रशिक्षित कर 60 से अधिक पुरस्कार एवं चेम्पियनशिप्स अर्जित की और स्वयं अपना रिकार्ड तोड़ा, 1957 में दिल्ली के तालकटोरा गार्डन के खुले रंगमंच पर प्रथम राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद तथा प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरू के तथा प्रथम विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष श्री सी.डी. देशमुख के समक्ष प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। उसके बाद प्रत्येक वर्ष अखिल भारतीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत होते रहे।

(5) 1987 में सोबियत रूप की यात्रा अपने 16 सदस्यीय कलाकारों के दल के साथ की और 60 से अधिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये। ताशकंद में भारत और सोवियत रूप के युवक समाराह के संयोजक बने।

(6) देश में जिन स्थानों पर युवक समारोह में विजित रहे तथा प्रदर्शन किये वे संक्षिप्त में इस प्रकार हैं :–

- 1956 नई दिल्ली, 1957 नई दिल्ली, 1958 नई दिल्ली, 1959 मैसूर, 1960 जयपुर, 1961 नई दिल्ली, 1962 चीन युद्ध के कारण युवक समारोह नहीं हुआ। 1963 नई दिल्ली, 1964 नई दिल्ली, 1965 पचमढ़ी, 1966 बंबई, 1967 भोपाल–उज्जैन–इंदौर, 1968 जम्मू कश्मीर एवं पंजाब, 1969 कामनवेल्थ युवक समारोह नई दिल्ली, 1970–71 राजस्थान, 1972 सांची, त्रिवेन्द्रम, 1973 लखनऊ, अन्तर्राष्ट्रीय, 1974 जयपुर, 1975 उज्जैन, 1975 भोपाल, इसप्रिंट 75 चेम्पियनशिव अर्जित की। 1976 इन्दौर फिल्म शायद में लोकनृत्य प्रदर्शन।

- वर्ष 1977 जयपुर, 1979 बंबई, 1980–81 बड़ोदरा, 1981 मद्रास फिल्म धनवाद, 1985 नई दिल्ली, निर्गुट देशों का युवक समारोह 1985 भोपाल, 1986 गुवाहाटी, 1987 सोवियत रूप, 1988 नई दिल्ली, जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम, 1989 नई दिल्ली, भारतीयम, 1989 उदयपुर, मूमल ट्राफी अर्जित की।

- वर्ष 19901 रुकड़ी, 1990 बनारस, 1991 पचमढ़ी, जयपुर, 1992 बुन्देली मेरा सागर, 1992 पचमढ़ी, इन्दौर, 1994 भोपाल, 1994 जबलपुर, 1994 टी.वी. मेट्रो चैनल का उद्घाटन भोपाल, 1995 भोपाल प्रथम अशैक्षणिक युवाओं का राष्ट्रीय युवक समारोह, 1995 गुलबरगा, 1995 भोपाल, 1995 हरियाणा, 1995 भोपाल, 1995 पचमढ़ी, 1996 ग्वालियर, 1996 आनंद गुजरात, गोल्डन कम, 1996 सागर, प्रथम युवक समारोह, 1997 बम्बई, 1997 भोपाल, 1998 नागपुर, ग्वालियर, नई दिल्ली, 1999 कालीकट, 1999 भोपाल लोकरंग, 1999 ग्वालियर, 2000 भोपाल, नागपुर, त्रिवेन्द्रम, 2000 खजुराहो, 2001 हिमाचल प्रदेश, सोनल, 2001 भोपाल, 2002 द्वारिका गुजरात, 2002 जबलपुर, 2002 पातालकोट, 2003 भोपाल, 2003 ग्वालियर, 2004 रोटरी इंटरनेशनल, 2004 लोक समारोह 10 ग्राम अंचल में प्रस्तुतिकरण, 2004 अखिल भारतीय फुटवाल के उद्घाटन पर 2004 वर्कशाप, 2004 सागर, 2005 सागर संभाग, 2005 भोपाल, 2005 नाकरंग भोपाल, 2006 नई दिल्ली, 2006 नई दिल्ली, म.प्र. का गोल्डन जुबली वर्ष 2006 ग्वालियर, 2007 बेगमगंज युवा महोत्सव, 2007 बुन्देली लोकोत्सव, हटा, 2007 बनारस संगीत नाटक एकेडमी का आयोजन, 2008 बसारी (खजुराहो प्रदर्शन एवं सम्मानित।
- देश के 1956 से लेकर 2001 तक सभी राष्ट्रपति, प्रधानमंत्रियों एवं विदेशी अतिथियों को राष्ट्रपति भवन त्रिमूर्ति भवन आदि में लोकनृत्यों का प्रदर्शन किया। प्रशंसा अर्जित की।
- बम्बई का मद्रास के फिल्म फेयर अवार्ड कार्यक्रम में लोकनृत्यों का प्रदर्शन किया, विशेष आमंत्रण पर।
- बम्बई में फिल्मों का नृत्य निर्देशन एवं लोक नृत्यों का प्रदर्शन फिल्म नई उमर की नई फसल, शायद, करवाचौथ, कफन आदि में किया।
- जम्मू काश्मीर एवं पंजाब में भारतीय सैनिकों को सीमारेखा पर 10 से अधिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये।

- भारत सरकार के संस्कृति विभाग द्वारा सीनियर फैलोशिप बुन्देलखण्ड के लोक नृत्यों पर काम करने के लिए प्रदान की।
- बुन्देलखण्ड के लोकनृत्यों को सबसे पहले 1957 में अखिल भारतीय मंच पर प्रस्तुत किया तथा लोकनृत्यों के प्रशिक्षण की पद्धति विकसति की।
- म.प्र. के पहले कलाकार निर्देशक अपने 16 सदस्यों के साथ सोवियत रूप की यात्रा की और सफल प्रदर्शन किया।

- देश के पहले युवा निर्देशक जिसके एम.ए. के तुरन्त बाद नौजवानों पर बनने वाली फिल्म 'नई उमर की नई फसल' में लोकनृत्य औ बैले प्रस्तुत किये।
- देश के पहले नृत्य निर्देशक जिसने देश व विदेशी अतिथियों के समक्ष राष्ट्रपति भवन, प्रधानमंत्री भवन तथा अन्तर्राष्ट्रीय समारोहों में लगातार प्रदर्शन किये।
- देश के पहले विद्यार्थी जिसने लोक कलाओं के लिए विश्वविद्यालय में अलग से विभाग की स्थापना की तथा शास्त्रीय, सामान्य एवं लोक प्रदर्शनकारी कलाओं का पाठ्यक्रम एवं पी.जी. डिप्लोमा शुरू किया।
- कामनवेल्थ युवक समारोह में विदेशी छात्राओं को भारतीय लोक नृत्यों में 36 घंटे में प्रशिक्षित कर राष्ट्रपति भवन में प्रस्तुति दी।
- देश की लोक कलाकारों को निःशुल्क प्रशिक्षित करने वाले पहले कोरियोग्राफर जिसने युवाओं को प्रशिक्षित करने के लिये लोक कला एकेडमी की स्थापना की तथा अनेक लोक प्रतिष्ठा समारोह आयोजित किये।
- पहली बार बुन्देली लोक कलाओं के लिये बुन्देली उत्सव चार दिवसीय आयोजित किया जिससे 40 हजार दर्शकों ने देखा, उसी परम्परा में बुन्देली उत्सव प्रतिवर्ष हटा में आयोजित कर रहे।

- सागर के नौजवानों को प्रशिक्षित कर 15 से अधिक संस्कृति दल तैयार किये जो देशभर में अपने सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहे हैं।
- म.प्र. के गणतंत्र दिवस पर म.प्र. के राज्यपाल से श्रेष्ठ ट्राफी अर्जित की।
- ग्राम अंचलों में रहने वाले ग्रामीणों को डेनेडा की स्वास्थ्य संबंधी योजनाओं को प्रसारित करने के लिये दस से अधिक लोक कलाओं द्वारा लोक समाराह आयोजित किये।
- हेल्थ एक्सप्रेस सागर आगमन पर एक माह तक सांस्कृतिक कार्यक्रम निःशुल्क प्रस्तुत किये।

- देश के पहली रंगीन फिल्म 1959 में जवारा लोकनृत्य का निर्माण किया तथा राजभवन पंचमढ़ी में।
- सागर में फिल्म एवं सी.डी. का निर्माण किया, विषय राष्ट्रीय पक्षी मयूर, मानवीय कटपुतलियों का प्रदर्शन, गढ़पेहरा धाम पहली बुन्देली भाषा की फिल्म दौदरा एक्सप्रेस निर्माणाधीन।
- डिजिटल सी.डी. का निर्माण लाला हरदौल, बुन्देलखण्ड के लोकनृत्य, बुन्देलखण्ड का जन्म से लेकर नृत्य तक का लोक संगीत पर डिजिटल सी.डी.।
- कृष्ण भक्त मीराबाई के 28 पदों पर नृत्य कोरोग्राफी कर रंगीन फिल्म बनाई जिसकी शूटिंग मीराबाई के जन्म स्थल राजस्थान में मेलता, द्वारिका, मथुरा, वृन्दावन, चित्तौड़ आदि में की और नई प्रतिभाओं को अवसर दिया।
- लोक कलाओं पर अनेकों वर्कशाप्स आयोजित कीं।
- लोक कलाओं के क्षेत्र में सबसे अधिक सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त करने वाले अकेले व्यक्तित्व आप युवाओं के कला गुरु के नाम से विख्यात हैं और लोक कलाओं के अकेले लोकविद हैं। जिनका सम्मान सम्पूर्ण प्रदेश में अनेकों बार किया गया।
- शोध एवं सर्वेक्षण का कार्य बुन्देलखण्ड के लोकनृत्य पर,

बस्तर के लोक नृत्यों पर, छिंदवाड़ा जिले के पाताल कोट जमीन से एक हजार फुट नीचे के आदिवासियों के लोकनृत्यों पर।

- बुन्देलखण्ड के कथानकों पर लोक संगीतकाय निर्माण (लाला हरदौल, ओरछा की नृत्य की प्रवीण राय, बेलातमाल गढ़पेहरा की नटनी) जो दो पहाड़ियों के बीच नाची थी।
- अनेकों छात्रवृत्ति धारकों (सीनियर और जूनियर फैलोशिप के) जो भारत सरकार द्वारा दी जाती है, उनका निःशुल्क मार्ग–दर्शन।

laf{kIr thou ifjp;

नाम	:	श्रीमति प्रमिला सागर
पिता का नाम	:	श्री हरगोविन्द विश्व
जन्म तिथि	:	26 अक्टूबर, 1960
जन्म स्थान	:	सागर (मध्यप्रदेश)
शिक्षा	:	एम.ए. (समाज शास्त्र) हिन्दी साहित्य संगीत प्रभाकर (गायन) प्रयाग संगीत समिति इलाबाद, फरफार्मिंग आर्ट्स डिप्लोमा, सागर विश्वविद्यालय लोक संगीत डिप्लोमा (खैरागढ़ संगीत विश्वविद्यालय)

उपलब्धियां :–

1. बुन्देली लोक संगीत के ग्रामोफोन रिकार्ड
2. पॉलीडोर इंडिया लिमि. मुम्बई एवं मिल कम्पनी
3. कैसेट्स एवं सी.डी. बुन्देली देवीगीत
4. आकाशवाणी एवं दूरदर्शन पर प्रस्तुति
5. लोक गायन प्रस्तुति – बी. हाईग्रेड आर्टिस्ट
6. विभिन्न मंचों पर प्रस्तुतियां
7. इग्नू पर शैक्षिक वार्ता का प्रसारण
8. लक्ष्मीबाई रायसो की मंच प्रस्तुति (गायन)
9. महर्षि सम्मान (गायन)
10. वाणी प्रमाण पत्र, प्रसार भारती ए.आई.आर. दिल्ली
11. अखिल भारतीय कवियत्री सम्मेलन सम्मान, 1989, नगर पालिका प्रशासन, दमोह

विशेष	:	समसामयिक विषयों पर विशेष नृत्य संयोजन संगीत संयोजन
पारम्परिक	:	खेल, चौक (रंगोली) अनुष्ठान चित्रकारी, हस्तकला में पारंगत।

thouo`r

नाम	:	डा. ओमप्रकाश चौबे
पिता का नाम	:	स्व. श्री अयोध्या प्रसाद चौबे
जन्म तिथि	:	01 जुलाई, 1952
पता	:	डा. ओमप्रकाश चौबे शांडिल्य सदन के पीछे, श्रीराम कालोनी, गोपालगंज वार्ड, सागर (म.प्र.) 470002
फोन नम्बर	:	07582–235692 मोबाइल नं. : 9893931888
शैक्षणिक योग्यता	:	एम.ए. (भूगोल), एम.ए. (हिन्दी), बी.एड., आयुर्वेद रत्न, बी.ई.एम.एस., विधि प्रथम, बी. म्यूज (तबला) प्रथम
अन्य योग्यताएं	:	विभिन्न जिला, संभाग, राज्य, राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक गतिविधियों में वर्ष 1970 से वर्तमान तक सफल भागीदारी

1) लोक कला अकादमी सांस्कृतिक गतिविधियों की संस्था में तथा विश्वविद्यालय में वर्ष 1970 से 1990 तक आयोजित सभी प्रमुख कार्यक्रमों, प्रतियागिताओं में भागीदारी की गई।

(डा. विष्णु पाठक के निर्देशन में)

2) लोकरंग अकादमी, गोपालगंज सागर की संस्था में वर्ष 1991 से 1996 तक लोक संगीत निर्देशन, गायन एवं प्रस्तुतियों में संलग्न रहा। (लगभग 25 प्रस्तुतियां)

(सहयोगी डॉ. सुधीर तिवारी)

3) अभिनव सांस्कृतिक मंच संस्था के संचालक के रूप में वर्ष 1977 से वर्तमान तक।

लेखन एवं सम्पादन	:	वर्ष 1980 से बुन्देली लोक साहित्य, गीत, संगीत, नृत्य, लोकचित्र आदि विषयों पर लेखन एवं संकलन कार्य से लगभग 140 लेख प्रकाशित (संलग्न)
लेखन	:	1) बुन्देली लोक गीतों में जीवन (प्रकाशित चौमासा) 2) बुन्देली गीतों में श्रृंगार सुषमा (प्रकाशित) 3) भई ने विरज की मोर (प्रकाशित) 4) बुन्देली गीतों में वर्णित राष्ट्रीयता (प्रकाशित) 5) कबीर छाप के बुन्देली लोकपद (प्रोजेक्ट संस्कृति विभाग का) 6) झगड़े की फागें (प्रकाशित ईसुरी) 7) विरह गीत/बारहमासा (प्रकाशन स्वीकृति प्राप्त ईसुरी) 8) संस्कार गीत (प्रोजेक्ट) प्रकाशित पुस्तक 9) जेवनार (बुन्देली गारी छायानाट में प्रकाशन हेतु) 10) सैरा–पाई (आकाशवाणी द्वारा वार्ता प्रकाशन) 11) बुन्देलखण्ड की फाग परम्परा (आकाशवाणो द्वारा प्रसारित वर्ष 06) 12) बेला नटनी – गढ़पहरा दुर्ग पर (प्रकाशित) 13) बुन्देली लोक नृत्य (प्रकाशित) 14) बुन्देली लोक चित्रावण (प्रकाशित चौमासा)

15) बुन्देली लोक कथाएं, 100 लोक कथाएं (प्रकाशित)
प्रोजेक्ट – लोककला आदिवासी परिषद
16) बुन्देली लोकनृत्य मौनियां
17) बुन्देली लोक गीतों में रामायण कथा (प्रकाशित, तुलसी साधना अंक : 2, 3, 4, 5)
18) लोक कलाओं का भविष्य (प्रकाशित)
19) 'अटका' बुन्देली लोक कथायें (प्रकाशन हेतु स्वीकृति प्राप्त पुस्तक)
20) बुन्देली लोकगीत (प्रकाशन हेतु स्वीकृति प्राप्त पुस्तक डॉ. जुगल नामदेव के साथ)

बुन्देली लोक गाथायें (प्रकाशित) :

1) धर्मा सांवरी
2) बैरायठा
3) सौरंगा सदाव्रज
4) ढ़ोला मारू
5) रैया
6) राजा गिलंद की गाथा
7) सिरसागढ़ की गाथा
8) धार पुवॉर का पवारा
9) जगदेव की गाथा, लीलावटी गाथा
10) धांदू भगत, कारसदेव की गाथा
11) बुन्देली लोक वाद्य (प्रकाशन हेतु)
12) प्राणायाम (प्रकाशित फार्माकोन)
13) रैया लोक गाथा (प्रकाशित चौमासा)
14) नर्मदा के गीत (प्रकाशन हेतु)
15) ''नौरता'' (प्रकाशन हेतु)
16) बुन्देली फाग परम्परा (प्रकाशित पुस्तक)
17) 'झगड़े की फागें' चौमास के अंक 49 से 54 तक लगातार प्रकाशित
18) बस्तर के लोक नृत्यों पर शोध एवं सर्वेक्षण 1978–80
लोक कला अकादमी, सांस्कृतिक दल के साथ किया गया।
19) फाग चयन समारोह, सागर
(बुन्देलखण्ड की फाग मंडलियों का चयन शिविर लोक कला 2001 आदिवासी परिषद के तत्वाधान में)
20) फाग चयन (टीकमगढ़ जिले में)
21) वर्ष 2000 से 2002 तक के लिए ''सीनियर फैलोशिप अवार्ड'' (बुन्देली गीतों पर)
22) राई – मोनोग्राफ प्रकाशन हेतु
23) चम्बल की संस्कृति एवं साहित्य (पुस्तक प्रकाशन हेतु 2003–04)
24) आदिवासियों का देवलोक (सर्वेक्षण : गौंड़, भोई एवं सौर जनजाति)
25) जनजातियों की फाग परम्परा (गौंड़, भोई, सौर एवं सहरिया) प्रकाशन हेतु प्रस्तुत
26) बुन्देलखण्ड के कीर्ति स्तंभ–हरदौल, आल्हा एवं ईसुरी (म.प्र. संदेश को)
27) फाग साहित्य : म.प्र. की जनपदों पर प्रकाशित पुस्तक

28) संस्कार गीत
29) मृत्यु गीत (प्रकाशन स्वीकृति प्राप्त)
30) कृष्ण लीला (अप्रकाशित)

राष्ट्रीय स्तर एवं राज्य स्तरीय प्रस्तुतियां :

1) वर्ष 1971–72 गणतंत्र दिवस पर राष्ट्रीय स्तर के युवक समारोह नई दिल्ली में सांस्कृतिक कार्यक्रम की सफल प्रस्तुति (गायन एवं नृत्य)
2) राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय युवक समारोह, लखनऊ (नृत्य)
3) घूमर 74, जयपुर : राष्ट्रीय स्तर के युवक समारोह (आदि.लोक नृत्य एवं गायन में प्रथम पुरस्कार)
4) 30वें फिल्म फेयर समारोह बाम्बे में लोकनृत्य की प्रस्तुति।
5) फिल्म फेयर समारोह मद्रास में बधाई नृत्य की प्रस्तुति, जुलाई 81
6) फिल्म ''शायद'' के एक गीत में सामूहिक नृत्य की भागीदारी, जुलाई, 78
7) बुन्देली लोक नृत्यों पर टेली फिल्म की शूटिंग वर्ष 1977–78 में भागीदारी
8) ''फूल वालों की सैर'' नई दिल्ली में लोकनृत्य में प्रथम पुरस्कार विजेता दल
9) कंचनजंगा उत्सव, सिक्किम में गीत एवं नृत्यों की प्रस्तुति
10) अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेला, नई दिल्ली में सैरा की भागीदारी
11) अंतर्विश्वविद्यालय युवक समारोह, उज्जैन में प्रथम पुरस्कार विजेता दल 1974
12) राष्ट्रीय युवक समारोह, कुरूक्षेत्र में प्रथम पुरस्कार विजेता दल
13) हरदौल चरित्र पर ''लोक संगीतिका'' में सहगायन 1979 (आकाशवाणी प्रसारण)
14) बेला तमाल ''लोक संगीतिका'' में गायन 1980 (आकाशवाणी प्रसारण)

संस्था की प्रस्तुतियां स्वयं क निर्देशन में :

1) ''जगार उत्सव''
2) ''पचमढ़ी उत्सव''
3) ''लोकरंग'' विजेता टीम
4) ''जतरा'' महोत्सव
5) ''ओरछा उत्सव''
6) ''जगार उत्सव''
7) ग्वालियर मेला
8) ''फूल वालों की सैर'' प्रथम स्थान प्राप्त
9) अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेला, नई दिल्ली
10) बिहार महोत्सव, पटना
11) ताज उत्सव, आगरा
12) खजुराहो उत्सव
13) ओरेंज फैस्टिबल, नागपुर
14) बुन्देली प्रसंग 'श्रुति' बुन्देली गायन
15) निमाड़ उत्सव, महेश्वर
16) कुल्लू महोत्सव, 2001
17) भक्ति पर्व, शहडोल

18) फाग चयन (टीकमगढ़ जिले में)
19) श्रुति, रविन्द्र भवन इन्दौर में लोकगाथा ..... रैया की प्रस्तुति
20) वर्ष 2000 में संस्कृति विभाग द्वारा संस्था के छात्र श्री चन्द्रशेखर उपाध्याय को लोकनृत्य,
बधाई पर स्कॉलरशिप प्रदान की गई।
21) वर्ष 2015 में अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म फेस्टिबल, खजुराहो में भागीदारी।

विशेष :–

1) वर्ष 2000 से 2002 तक के लिए ''सीनियर फैलोशिप अवार्ड'' बुन्देली गीतों पर
2) बुन्देलखण्ड में प्रचलित पारम्परिक गीतों पर लोक नाद, नई दिल्ली में म.प्र. दिवस पर – सह निर्देशन
3) ए.वी.आर.सी. द्वारा निर्मित तीन फिल्मों में भागीदारी, संगीत निर्देशन प्रस्तुत किया, बधाई, लोक चित्रकला, मिट्टी के बर्तन
4) ''लोकनाद'' निमाण उत्सव महेश्वर में सह निर्देशन
5) मेघोत्सव, कालीदास अकादमी उज्जैन का आयोजन (सैरा नृत्य की प्रस्तुति)
6) लोकरंजन, खजुराहो
7) लोकोत्सव, सागर
8) लोकरंग, भोपाल (सैरा लोकनृत्य में द्वितीय स्थान, विजेता दल)
9) भोपाल दूरदर्शन के निर्माणाधीन टी.वी. सीरियल ''गुलफाम'' में भागीदारी
10) ''बादल राग'' भारत भवन भोपाल में सैरा नृत्य की प्रस्तुति
11) श्रुति : बुन्देली गायन पर आधारित कार्यक्रम में निर्देशन
12) राई : बुन्देली गायन पर आधारित कार्यक्रम में निर्देशन
13) तीज उत्सव हिसार, हरियाणा में सैरा की प्रस्तुति
14) कला यात्रा : ई.टी.व्ही. के सीरियल में प्रमुख भागीदारी
15) बुन्देली गीतों में जल का महत्व (प्रकाशित चौमासा)
16) बुन्देली बन्ना गोत ''लूर'', राजस्थान (प्रकाशन हेतु)
17) वसदेवा गायन : मुम्बई कथा गायन की प्रस्तुति, दिसम्बर 2006
18) विरासत, आकाशवाणी दिल्ली में प्रसारित वार्ता में स्क्रिप्ट लेखन
19) धरोहर : ऐरण स्थल पर आकाशवाणी सागर में कार्यक्रम की प्रस्तुति
20) ओरछा का सांस्कृतिक, धार्मिक एवं ऐतिहासिक महत्व (चौमासा)
21) कृष्णलीला गीत : तुलसी साधना अंक–7 से लगातार प्रकाशित
22) ।ज अंतर्राष्ट्रीय सांगीतिक कार्यक्रम नई दिल्ली, 2013
23) बुन्देली शब्दकोष प्रकाशन हेतु प्रस्तुत (30,000 शब्दों का)
24) आकाशवाणी से प्रसारित वातायें (लगभग 25 वार्तायें)
(सागर, छतरपुर, ग्वालियर एवं दिल्ली केन्द्रों द्वारा)

सेमीनार :

1) सागर की विरासत, मानव शास्त्र विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
2) वृहद देशी संगीत महोत्सव, संगीत नाटक अकादमी, दिल्ली
3) स्वतंत्रता संग्राम में बुन्देलखण्ड की भूमिका, प्राचीन भारतीय इतिहास, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर

सम्मान :

1) मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, शाखा सागर द्वारा वर्ष 2010 को श्री जगदीश तिवारी ''बदनाम'' सम्मान
2) मध्यप्रदेश लेखक संघ भोपाल द्वारा कस्तूरी देवी चतुर्वेदी स्मृति लाकभाषा सम्मान 2013

(डा. ओ.पी. चौबे)

परिचय

नाम: प्रवीण गुप्त

पिता का नाम : डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त

जन्मतिथि :22 सितम्बर 1970

शिक्षा :बी.कॉम.

व्यवसाय :मुद्रण एवं प्रकाशन

संप्रति :महासचिव, प्रसंग नर्मदा आयोजन समिति, छतरपुर (म.प्र.)

महासचिव, बुन्देलखण्ड सांस्कृतिक एवं सामाजिक सहयोग परिषद, इकाई-छतरपुर

आयोग मित्र, म.प्र. मानव अधिकार आयोग

प्रचार सचिव, भारत विकास परिषद, शाखा, छतरपुर (म.प्र.)

प्रचार सचिव, माँ अन्नपूर्णा रामलीला समिति, छतरपुर (म.प्र.)

कार्यकारिणी सदस्य, श्री श्री 1008 श्री लालकड़क्का रामलीला समिति, छतरपुर (म.प्र.)

कार्यकारिणी सदस्य, स्व. बाबूराम चतुर्वेदी स्टेडियम समिति, छतरपुर (म.प्र.)

कार्यकारिणी सदस्य, भारत माता सेवा समिति, छतरपुर (म.प्र.)

ट्रस्टी, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त माध्यमिक विद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

ट्रस्टी, सरस्वती सदन पुस्तकालय पब्लिक ट्रस्ट, छतरपुर (म.प्र.)

ट्रस्टी, बुन्देलखण्ड केशरी छत्रसाल स्मारक लोकन्यास, छतरपुर (म.प्र.)

जिला संयोजक, सांस्कृतिक प्रकोष्ठ, भाजपा, छतरपुर (म.प्र.)

मीडिया प्रभारी, रोटरी क्लब, छतरपुर

मार्गदर्शक : गहोई गौरव त्रैमासिक पत्रिका।

प्रकाशन : देश की प्रसिद्ध पत्र पत्रिकाओं में कहानी, कविता, परिचर्चा आदि का प्रकाशन।

प्रसारण : आकाशवाणी छतरपुर के अनुबंधित कवि व वार्ताकार।

संपादन : संवादों के दायरे में हिन्दी, स्मृति शेष: डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त

श्री जगदम्बा प्रसाद निगम अभिनन्दन ग्रंथ

संयोजक :श्रावण द्वादशी माँ अन्नपूर्णा मेला जलविहार समिति द्वारा आयोजित अखिल भारतीय कवि सम्मेलन।

सम्मान : छत्रसाल महोत्सव समिति द्वारा तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री दिग्विजय सिंह द्वारा अभिनंदित।

बुन्देली विकास संस्थान, बसारी एवं पेप्टेक ग्रुप छतरपुर द्वारा सम्मानित

आत्मकथ्य: पूज्य पिता जी डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त के कारण बचपन से साहित्यिक अभिरुचि। कार्यक्रमों का आयोजन। युवा अवस्था में युवा सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिषद की स्थापना तथा अनेक आयोजनों का संयोजन। बुन्देलखण्ड सांस्कृतिक एवं सामाजिक सहयोग परिषद, लखनऊ की छतरपुर में शाखा स्थापना। सात दिवसीय हिन्दी महोत्सवों का 1984 से 2002 तक सफल आयोजन। 2003 में पिताजी के निधन के उपरांत प्रसंग नर्मदा आयोजन समिति का गठन। समिति द्वारा प्रतिवर्ष देश के 1 ख्यात लोकविद् को डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त स्मृति लोक संस्कृति रत्न अलंकरण। अभी तक डॉ. कपिल तिवारी-भोपाल, डॉ. श्रीमती विद्याविन्दु सिंह- लखनऊ, डॉ. श्याम सुन्दर दुबे-हटा, डॉ. महेन्द्र भानावत-राजस्थान, डॉ. भगवती लाल राजपुरोहित-उज्जैन को यह अलंकरण प्रदान किया गया। आयोजन में लुप्त होती विधाओं नौटंकी, बधाई आदि का प्रदर्शन। डॉ. गुप्त के नाम से लोकविद् डॉ. नर्मदा प्रसाद गुप्त स्मृति उद्यान का विधान सभा अध्यक्ष माननीय श्री ईश्वरदास जी रोहाणी द्वारा लोकार्पण।

संपर्क :मंगलम्, सर्किट हाउस मार्ग, छतरपुर (म.प्र.) 471001, मो. 9826654410